अक्तूबर - दिसंबर 2005 वर्ष : 37 ✳ अंक : 4

वैज्ञानिक

हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद् की पत्रिका

भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र के सौजन्य से प्रकाशित

नैनो विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी का महत्त्वपूर्ण चरण

फुल्लरीन की खोज पर नोबेल पुरस्कार (1996) की घोषणा

प्रोफेसर रिचर्ड ई. स्मैली (1943 - 2005)

: मूल्य : 20 रु

डॉ. होमी भाभा हिंदी विज्ञान लेख प्रतियोगिता - 2006

हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद एवं राजभाषा कार्यान्वयन समिति (भा. प. अ. केंद्र) के संयुक्त तत्वावधान में आयोजित **हिंदी विज्ञान लेख प्रतियोगिता** हेतु प्रविष्टियां आमंत्रित हैं। लेख में किसी भी वैज्ञानिक विषय पर मौलिक एवं आधुनिक जानकारी होनी चाहिए। लेख का अप्रकाशित होना अनिवार्य है। **मूल्यांकन में नवीनतम जानकारी के साथ-साथ अच्छे रेखाचित्रों / फोटोग्राफों, तालिकाओं इत्यादि को समुचित महत्व दिया जाता है।** अत: चित्रों को अलग से सफेद कागज / ट्रेसिंग पेपर पर काली रोशनाई (इंडिया इंक) से बनायें। फोटोग्राफ ब्लैक एंड व्हाइट हों तो उचित रहेगा। इन्हें लेख के अंत में संलग्न करें। नीचे दिये गये पते पर कृपया दो टंकित अथवा स्पष्ट हस्तलिखित प्रतियां (लगभग 3000 - 4000 शब्द) भेजें।

अंतिम तिथि : 15 दिसंबर 2006

: पुरस्कार :

प्रथम	-	2000/= रु.
द्वितीय	-	1500/= रु.
तृतीय	-	1000/= रु.
प्रोत्साहन	-	500/= रु.

पांच प्रोत्साहन पुरस्कार एवं अहिंदी भाषी प्रतियोगियों को दो विशेष पुरस्कार 500/- रु (प्रत्येक) के दिये जायेंगे। अत: अपनी मातृभाषा का स्पष्ट उल्लेख करें।

विशेष : पुरस्कृत रचनाएं "वैज्ञानिक" की संपत्ति होंगी। "वैज्ञानिक" पत्रिका से संबंधित पदाधिकारी इस प्रतियोगिता में भाग नहीं ले सकेंगे। यदि रचना एक ही लेखक द्वारा लिखी गयी हो तो उचित होगा।

प्रविष्टियां भेजने का पता :

श्री कुलवंत सिंह, प्रतियोगिता संयोजक एवं व्यवस्थापक "वैज्ञानिक",
वैज्ञानिक अधिकारी, पदार्थ संसाधन प्रभाग (MPD), मॉड लैब,
भा. प. अ. केंद्र (BARC), मुंबई - 400 085. फोन : 022-2559 5378

अ नु क्र म णि का

वैज्ञानिक

वर्ष 37 अंक 4

अक्तूबर - दिसंबर 2005

: व्यवस्थापन मंडल :

श्री कुलवंत सिंह
(संयोजक)
डॉ. अशोक कुमार सूरी
श्री राम नरेश शर्मा
श्री सत्य प्रभात प्रभाकर
श्री संजय गोस्वामी

: संपादन मंडल :

डॉ. गोविंद प्रसाद कोठियाल
(संयोजक)
डॉ. राज नारायण पांडेय
श्री जय प्रकाश त्रिपाठी
श्री कवींद्र पाठक

वार्षिक शुल्क

संस्थागत	व्यक्तिगत
100 रु.	50 रु.

कार्यालय

"वैज्ञानिक", हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद,
सूचना प्रभाग, सेन्ट्रल कांप्लेक्स,
भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र,
मुंबई - 400 085

● "वैज्ञानिक" में लेखकों द्वारा व्यक्त विचारों से संपादन मंडल का सहमत होना आवश्यक नहीं है।
● "वैज्ञानिक" में प्रकाशित समस्त सामग्री के सर्वाधिकार हिं. वि. सा. परिषद के पास सुरक्षित हैं।
● "वैज्ञानिक" एवं हिं. वि. सा. परिषद से संबंधित सभी विवादों का निर्णय मुंबई के न्यायालय में ही होगा।

'वैज्ञानिक' में प्रकाशित सामग्री का आप बिना अनुमति लिये उपयोग कर सकते हैं। परंतु इस बात का उल्लेख करना अनिवार्य होगा कि अमुक सामग्री 'वैज्ञानिक' से साभार ली गयी है।

संपादकीय 3

लेख

1. स्नेहन एवं स्नेहक 5
   - दीप्ति उपाध्याय व प्रदीप कुमार मिश्र
2. नैनो प्रौद्योगिकी का रोमांचक भविष्य 14
   - डॉ. गोविंद प्रसाद कोठियाल
3. सूर्य : ऊर्जा का स्वच्छ अपारंपरिक स्रोत 22
   - इंदिरा कड़ाकोटी एवं कविता पांडेय

टिप्पणियां

1. बड़ी इलायची 25
   - आनंदसिंह बिष्ट
2. अंतरिक्ष कुछ नया-नया 26
   - राशी मेहरोत्रा
3. दम तोड़ता क्योटो-समझौता 27
   - अरुण कुमार पांडेय
4. अंतरिक्ष में ग्रहों की परेड 28
   - रूफिया ख़ान
5. सौर मंडल के 66 चंद्रमा (उपग्रह) 29
   - उदयवीर सिंह
6. खेल और शारीरिक क्षमता 30
   - रामचंद्र खिलेरी

विज्ञान प्रेमी व्यक्तित्व

पोप जॉन पॉल द्वितीय: कुछ रोचक जानकारियां 32
- डॉ. देवकी नंदन

विज्ञान समाचार

● भा. प. अ. केंद्र से 33
● अन्य विज्ञान समाचार 35

कुछ जानकारियां 38

एक विवेचन

विज्ञान के प्रति घटती रुचि की बढ़ती समस्या 42
- डॉ. दिनेश मणि

पुस्तक समीक्षा

विज्ञान संचार 45
- डॉ. मनोज पटैरिया

विज्ञान कविता

सूर्य किरणों की प्यास 46
- डॉ. देवेंद्र नाथ श्रीवास्तव

अपना अपना बोझ 48
- डॉ. रोहितश्याम चतुर्वेदी 'शलभ'

कुछ फूल : कुछ कांटे 47

आवरण पृष्ठ पर दिये चित्र का विवरण . . .

फुल्लरीन के खोजकर्ता, प्रोफेसर रिचर्ड ई. स्मैली का जन्म 6 जून 1943 को अमरीका के ओहाइयो (Ohio) राज्य के आक्रॉन शहर में हुआ था । आपके पिता श्री फ्रैंक डडले स्मैली रेल डाक सर्विस में एक साधारण क्लर्क से बढ़कर 'इंप्लीमेंटेशन एंड ट्रेक्टर' नामक जर्नल निकालने वाली कंपनी के प्रमुख कार्यकारी अधिकारी (CEO) के पद से रिटायर हुए । विज्ञान के प्रति प्रो. स्मैली का झुकाव उनकी माता श्रीमती एस्थर वर्जीनिया रोहड्स के कारण हुआ । 1957 में स्पूतनिक का सफल प्रक्षेपण उनके जीवन की एक प्रेरणादायक घटना रही । 1965 में आप स्नातक की उपाधि ग्रहण करने के उपरांत न्यूजर्सी के वुडबरी में पॉली प्रॉपेलीन बनाने वाली एक बड़ी कंपनी में कार्य करने लगे । दो वर्ष बाद प्लास्टिक टैक्निकल सेंटर में चले गये । 1969 में प्रिंस्टन विश्वविद्यालय के रसायनिकी विभाग में प्रो. इलियट आर. बर्नस्टीन के मार्गदर्शन में कार्य शुरू किया ।

यहीं पर उन्होंने संघनित प्रावस्था (फ़ेज) तथा आण्विक प्रणालियों की रसायन-भौतिकी के बारे में सही तौर पर जाना । आपने शिकागो विश्वविद्यालय में प्रो. डोनाल्ड एच. लेवी के साथ अपना पोस्ट डॉक्टरल कार्य 1973 में प्रारंभ किया । 1976 में आप राइस विश्वविद्यालय के रासायनिकी विभाग में सहायक प्रोफेसर बने । उसके बाद उनके जीवन का चरम पक्ष शुरू हुआ तथा उन्होंने प्रो. रोबर्ट एफ. कर्ल एवं अन्य वैज्ञानिकों के साथ कई उल्लेखनीय कार्य किये । स्पंदी लेसर पुंज को एक नॉजल के अंदर से गुजार कर नियंत्रित रूप से परमाण्विक क्लस्टर तैयार करने में सफलता प्राप्त की । इसी के परिणामस्वरूप उन्होंने 1996 में नोबेल पुरस्कार दिलाने वाले कार्बन क्लस्टर, जिसे फुल्लरीन कहा जाता है, की खोज करने में सफलता प्राप्त की । प्रो. रिचर्ड स्मैली का 28 अक्तूबर 2005 को निधन हो गया । इस महान वैज्ञानिक को हम श्रद्धांजली अर्पित करते हैं ।

श्री ज्ञानोत्तम लाल गोस्वामी

: श्रद्धांजली :

भाभा परमाणु अनुसंधान के वरिष्ठ वैज्ञानिक तथा हिंदी के माध्यम से वैज्ञानिक व तकनीकी जानकारी के प्रचार-प्रसार के लिए कटिबद्ध **श्री ज्ञानोत्तम लाल गोस्वामी** का दिनांक 15 अप्रैल 2006 को निधन हो गया । उनके असामयिक निधन के समाचार से केंद्र का समूचा वैज्ञानिक समुदाय, कर्मचारी गण और 'हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद' से जुड़े तमाम लोग व्यथित एवं स्तब्ध हैं ।

श्री ज्ञानोत्तम लाल गोस्वामी का जन्म सन 1947 में उत्तर प्रदेश के मैनपुरी शहर में हुआ था । अपनी प्रारंभिक शिक्षा मैनपुरी में ही पूरी करने के बाद उन्होंने रुड़की विश्वविद्यालय से धातु विज्ञान में इंजीनियरिंग की स्नातक उपाधि अर्जित की थी । भा. प. अ. केंद्र के चौदहवें बैच में प्रशिक्षण प्राप्त करने के पश्चात जुलाई 1971 से अप्रैल 2006 की अपनी कार्यावधि में **श्री ज्ञानोत्तम लाल गोस्वामी** ने केंद्र की कई महत्त्वपूर्ण वैज्ञानिक एवं प्रौद्योगिकी गतिविधियों में अहम् भूमिका निभाई थी । सन 1974 में एवं 1998 के पोखरण परीक्षणों में भी आपने सराहनीय योगदान दिया था । वेल्डिंग, प्लूटोनियम-नाभिकीय ईंधन एवं इसके परीक्षण तथा लेसर प्रौद्योगिकी के विशेषज्ञ के रूप में उन्हें सदैव याद किया जायेगा । **श्री ज्ञानोत्तम लाल गोस्वामी** ने 300 से भी अधिक शोध पत्र प्रकाशित किये तथा कई वैज्ञानिक एवं प्रौद्योगिक संस्थाओं के सक्रिय सदस्य के रूप में आधुनिक तकनीकी के विकास में श्लाघनीय कार्य किया था ।

विज्ञान, साहित्य एवं कला पर समान अधिकर रखने वाले **श्री ज्ञानोत्तम लाल गोस्वामी** ने चार वर्षों तक 'हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद' के सचिव के रूप में कार्य किया था और राष्ट्रभाषा हिंदी में वैज्ञानिक जानकारी के प्रचार-प्रसार के कार्य को एक नयी ऊंचाई प्रदान की थी । साहित्य और विशेष रूप से काव्य सृजन में उनकी गहरी रुचि थी । गत दो-तीन वर्षों में उन्होंने अपनी कविताओं की पांच पुस्तकें प्रकाशित की थीं । कुछ दिनों पूर्व ही उनकी पत्नी का देहावसान हुआ था । वे स्वयं भी काफ़ी बीमार चल रहे थे । ऐसे में साहित्य ही उन्हें ऊर्जा प्रदान करता था । शारीरिक क्लेश के बावजूद रचनाधर्मिता के प्रति उनका समर्पण एवं निर्वहन सदा वंदनीय रहेगा ।

अंत में पुनः द्रवित हृदय से श्रद्धा सुमन अर्पित करते हुए हम सबकी ओर से उन्हें श्रद्धांजली !

जयप्रकाश त्रिपाठी
स. संपादक 'वैज्ञानिक'

संपादकीय

नये वैश्विक परिदृश्य में विज्ञान शिक्षण पद्धति में संशोधन आवश्यक :

वर्ष 2005, जिसे 'भौतिकी' के अंतर्राष्ट्रीय वर्ष के रूप में मनाया जा रहा है, में विज्ञान में अच्छे विद्यार्थियों की रुचि की वर्तमान स्थिति को देखते हुए यह अवश्य साफ हो रहा है कि कहीं न कहीं विज्ञान शिक्षण पद्धति में चूक हो रही है। हालांकि प्रतिवर्ष विद्यार्थियों की संख्या बढ़ रही है परंतु उनका झुकाव विज्ञान विषय की ओर न होकर अन्य रोजगारोन्मुख विषयों की ओर है। और ऐसा होना कोई आश्चर्यजनक बात भी नहीं है ('वैज्ञानिक' जन.-जून 2001 अंक का संपादकीय)। इस संबंध में डॉ. दिनेश मणि के विचार वर्तमान अंक में अन्यत्र दिये गये हैं।

यह उल्लेखनीय है कि यह स्थिति न केवल भारत में मौजूद है बल्कि लगभग सभी (विकसित एवं विकासशील) देशों में व्याप्त है। अतः इस स्थिति से निपटने के लिए विश्वभर के शिक्षा शास्त्रियों में कई स्तरों पर विचार विमर्श एवं शोध कार्य चल रहे हैं। इन शोध कार्यों के परिणामों एवं युवा वैज्ञानिकों की प्रतिक्रियाओं के विश्लेषण से यह संकेत मिलता है कि विज्ञान के विषयों में स्नातक एवं स्नातकोत्तर जिसमें पीएच. डी. भी शामिल है, की उपाधियों को हासिल करने में लगाये गये बौद्धिक परिश्रम एवं समय के बाद भी इन विद्यार्थियों का भविष्य बहुत अधिक उज्ज्वल नहीं है, हालांकि हाल में एक समाचार पत्र (टाइम्स ऑफ इंडिया) के सर्वेक्षण ने वैज्ञानिकों का स्थान प्रशासनिकों एवं सामान्य इंजीनियरों के मुकाबले थोड़ा ऊपर पाया। परंतु ये सर्वेक्षण कभी-कभी वास्तविकता से भिन्न परिदृश्य भी प्रस्तुत करते हैं। कई दशकों के बाद अब यह स्थिति औद्योगिक जगत में भी धीरे धीरे स्पष्ट हो रही है कि एक इंजीनियरी में पीएच. डी. के मुकाबले विशुद्ध विज्ञान का पीएच. डी. की उपाधिवाला वैज्ञानिक उद्योगों में निर्माण प्रक्रिया (प्रोसेस) में दक्षता लाने, कुछ मौलिक समस्याओं को समझने एवं सुलझाने में, गुणता एवं उत्पादकता को बढ़ाने में अच्छी भूमिका निभा सकती है। यह उसकी मौलिक सोच एवं विज्ञान शिक्षण दिशा का परिणाम है।

जब यह बात स्पष्ट है कि विज्ञान शिक्षा ही मानव जाति के लिए विकसित एवं स्वस्थ परिवेश प्रदान कर सकता है तो इस विज्ञान शिक्षण में भी समयानुकूल संशोधन आवश्यक हैं। पिछले कुछ दशकों में समाज तथा उसके परिवेश में जो परिवर्तन आये हैं, और उनके कारण आने वाला समाज जिन वैश्विक स्तर के मामलों/मुद्दों का सामना करेगा उन हालातों के लिए समर्थ बनने हेतु हमारी विज्ञान शिक्षा को नया स्वरूप देना आवश्यक हो गया है। विश्व भर में विज्ञान शिक्षण अनुसंधान पर चल रहे शोधकार्यों से यह स्पष्ट होता है कि विद्यार्थियों को पारंपरिक तरीकों के बदले संकल्पनात्मक / वैचारिक (Conceptual) पद्धति के द्वारा विज्ञान के प्रति सकारात्मक समझ दी जा सकती है। इसमें उपलब्ध प्रगत कंप्यूटर एवं अन्य तकनीकों (टूल) का प्रयोग करके विज्ञान के मौलिक नियमों की समरूपता दर्शाते हुए पढ़ाया जा सकता है। निसंदेह इसका प्रभाव अधिक लाभपूर्ण रहेगा।

आज के बदलते परिवेश में जब हमारी सामाजिक आर्थिक व्यवस्था काफी हद कई नयी उभरती प्रौद्योगिकियों पर निर्भर करेगी तब हमें विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी की अच्छी समझ तथा समस्याओं का समाधान करने के लिए आधुनिक पद्धतियों की जानकारी ही सही दिशा दे सकेगी।

विद्यार्थी जो भविष्य के कर्णधार होंगे, उनको दी जा रही शिक्षा किस हद तक सार्थक है उसके बारे में विचार करना जरूरी हो गया है। इसकी आवश्यकता इसलिए भी आ पड़ी है क्योंकि आज की शिक्षा का ध्येय न केवल जनसंख्या के अधिकांश भाग को उद्देश्य-पूर्ण शिक्षा देना है बल्कि उनमें से बड़ी संख्या में उच्च स्तर के वैज्ञानिकों को उभारना भी है। आम तौर पर विज्ञान के बारे में यह भ्रांति है कि यह एक अरुचिकर विषय है, जिसे केवल रट कर ही समझा जा सकता है। यह शायद इसलिए भी है कि पारंपरिक शिक्षण में इस ओर कोई ध्यान नहीं दिया गया। अध्यापक कक्षा में अपना व्याख्यान देता है, कुछ गृह कार्य हेतु ऐसे प्रश्नों का पुलिंदा थमा देता है जिनके सूक्ष्म मात्रात्मक उत्तर हों तथा फिर परीक्षा में इसी तरह के प्रश्नों पर मूल्यांकन किया जाता है। इसमें निसंदेह रटने तथा उसको कम से कम समय में उत्तर देकर अधिकतम अंक प्राप्त करने की दिशा में तैयार किया जाता है। परिणाम होता है, वैचारिक हीनता वाले विद्यार्थियों का समुदाय।

इसके विपरीत यदि विद्यार्थियों को वैज्ञानिक तर्कों, वैचारिक सोच के साथ पाठ पढ़ाया जाय तो उन्हें कुछ गिने चुने प्रश्नों (जिनको उन्होंने कई बार हल किया हो) के अतिरिक्त अन्य प्रश्नों को हल करने में सुविधा रहेगी। वे अपनी समझ का अतिरिक्त उपयोग कर सकेंगे।

आइए, एक आम समस्या पर ध्यान देते हैं। जन स्वास्थ्य आज की एक आम समस्या है। इसमें कोई दो राय नहीं हैं कि यदि हम कुछ बचाव/निवारक संबंधित कदम उठायें तो जन स्वास्थ्य में सुधार होगा। परंतु यदि स्वच्छ जीवन शैली

एवं स्वच्छ पर्यावरण के बारे में विद्यार्थियों को वैज्ञानिक तर्कों के साथ शिक्षित किया जाय तो उनमें यह अनुशासन खुद ब खुद आ जायेगा ।

विज्ञान शिक्षा का सही तौर पर विद्यार्थियों तक न पहुंच पाने के कारणों पर कई चिंतन हो रहे हैं । पारंपारिक तरीकों से दी जा रही भौतिकी की शिक्षा का एक मूल्यांकन तीन आधारों पर किया गया है, (i) वैचारिक (संकल्पनात्मक) समझ, (ii) जानकारी (ज्ञान) का स्थानांतरण (संचार), तथा (iii) भौतिकी के बारे में नकारात्मक सोच (विश्वास) । इन शोधों के कुछ परिणाम इस प्रकार हैं ।

हार्वड विश्वविद्यालय के प्रख्यात शिक्षाविद् प्रो. एरिक मज़ूर ने विद्यार्थियों में वैचारिक सोच के आधार पर परखने के लिए विद्युत परिपथ संबंधी सरल युगल प्रश्नों को पूछा तो निष्कर्ष यह था - अधिकांश विद्यार्थी पारंपरिक परीक्षा से संबंधित प्रश्नों के उत्तर भौतिकी की संकल्पनाओं को समझे बिना सही दे पाये । जबकि संकल्पनाओं (**concepts**) पर आधारित प्रश्नों के प्रति बहुत खराब रेस्पाँस रहा । इसी प्रकार अध्यापकों द्वारा व्याख्यानों में दी गयी ध्वनि संबंधित जानकारी को लगभग **15** मिनट बाद पूछा गया तो केवल **10%** विद्यार्थी ही सही रहे । यानी ऐसे प्रश्न जिनके उत्तर साफ न हों (**nonobvious**), **15** मिनट से अधिक समय तक याद नहीं रह पाते हैं । इसका अर्थ यह नहीं कि अधिकांश अध्यापक बेकार हैं परंतु यह स्पष्ट होता है कि यदि हमें अच्छे परिणाम चाहिए तो अध्यापकों को अपने व्याख्यान काफी सावधानी पूर्वक तैयार करना होगा । उनमें वैचारिकता विकसित करनी होगी । तीसरे आधार पर किये गये सर्वेक्षण में यह पाया गया कि पारंपरिक तरीके से पढ़ाये गये पाठ से विद्यार्थियों की समझ विशेषज्ञ जैसी नहीं बन पाती है । उनकी समझ में यही नकारात्मक तत्त्व मौजूद रहता है कि भौतिकी अथवा कोई भी विज्ञान विषय एक वास्तविकता जीवन से अलग, अरुचिकर विषय तथा उसे रट कर समझा जा सकता है ।

विज्ञान शिक्षण विशेषज्ञ मानते हैं कि इस स्थिति को सुधारा जा सकता है, बशर्ते कि हम शिक्षा प्रणाली के तरीकों को संशोधित करें । इसके लिए अध्यापन हेतु आधुनिक तकनीकों, उपलब्ध नये साधनों (टूल्स) को अपनाना होगा । विद्यार्थियों को अध्यापक एक समय में केवल उतनी ही जानकारी दे जितनी उनकी समझ में आ सके । क्योंकि विद्यार्थियों का दिमाग भी एक वैयक्तिक कंप्यूटर के समान है जिसकी कुछ सीमित रेंडम एक्सेस मेमोरी होती है । यदि इसको क्षमता से अधिक जानकारी संसाधन हेतु दी जाय तो उसमें शिथिलता आ जाती है । इसलिए व्याख्यानों में दी जाने वाली सामग्री कम से कम रखी जाय, नये परिणामों को उन तथ्यों से जोड़कर बताया जाय जिसे विद्यार्थी पहले से जानता हो । साथ ही अपरिचित शब्दावली से भी बचना चाहिए । विद्यार्थी को विशेषज्ञ योग्यता के करीब तभी लाया जा सकता है जब वह सक्रिय तौर पर सोचने लगेगा । विद्यार्थी के दिमाग से नकारात्मक सोच को तभी बाहर निकाला जा सकता है जब विज्ञान की घटनाओं को वास्तविक जीवन (प्रकृति की सदृश्य घटनाओं) से जोड़कर समझाया जाय ।

इसके साथ-साथ विज्ञान शिक्षण शोधों द्वारा पूर्णत: स्थापित तथ्यों को कार्यरूप देने के लिए नयी शिक्षण प्रणाली को अपनाना होगा जिसमें उदाहरण के लिए ऑन लाइन सर्वेक्षण, अध्यापक-विद्यार्थी के बीच ई-मेल द्वारा संचार सुलभ बनाया जा सकता है । वैयक्तिक इलेक्ट्रॉनिक, रेस्पाँस प्रणालियां जैसे 'क्लिक्कर', प्रतिक्रियात्मक समरूपण प्रणालियां इत्यादि द्वारा विद्यार्थियों में संकल्पनात्मक ज्ञान बढ़ाया जा सकता है । विद्यार्थियों को आपस में विचार विमर्श के लिए प्रेरित करना तथा वैज्ञानिक तर्कों के साथ प्रश्नों के उत्तर में सहमति जैसे तत्त्व लाने होंगे। प्रतिक्रियात्मक समरूपण पद्धति में कंप्यूटर समरूपण मॉडलों की सहायता से वैज्ञानिक घटना को समझाने से विद्यार्थियों में वैचारिक सोच बढ़ती है जिन घटनाओ को विद्यार्थी होते हुए देखता है उसे समझने में आसानी रहती है, उसकी छाप मस्तिष्क में संग्रहित हो जाती है । तभी वह विशेषज्ञ की तरह किसी घटना को समग्रता के साथ देख पाने की क्षमता अर्जित कर सकता है ।

इस प्रकार शिक्षण प्रक्रिया पर निरंतर शोध, सावधानी पूर्वक किये गये प्रयोग तथा नयी तकनीकों का उपयोग निश्चित तौर पर विद्यार्थियों को सही समझ के मार्ग पर चलाकर विज्ञान के प्रति चाहत बढ़ाने में सहायता करेगा। कल्पना में निहित अपार शक्ति को विशुद्ध विज्ञान से प्रवर्धित करके वह सही मायने में वैज्ञानिक बन सकता है । शिक्षा का उद्देश्य विद्यार्थी को एक आम मशीन चालक बनाने के स्थान पर उसे रचनात्मक योगदान देने वाला नागरिक बनाना होता है ।

●

'वैज्ञानिक' का अक्तूबर-दिसंबर **2005** अंक प्रस्तुत है । इसमें अन्य अंकों की भांति लेख/टिप्पणियां तथा अन्य जानकारियां समाहित हैं । अंतर्राष्ट्रीय भौतिकी वर्ष के दौरान राष्ट्र के अन्य संस्थानों के साथ-साथ भा.प.अ. केंद्र ने भी कई व्याख्यानों का आयोजन किया । कुछ पाठकों ने अच्छी एवं रोचक जानकारियां प्रकाशन हेतु भी भेजीं, हम उनके आभारी हैं । पाठकों के सुझाव एवं प्रतिक्रियाएं "वैज्ञानिक" में नवीनता लाने के लिए अपेक्षित हैं ।

- डॉ. गोविंद प्रसाद कोठियाल

स्नेहन एवं स्नेहक

दीप्ति उपाध्याय व प्रदीप कुमार मिश्र

रसायन अभियांत्रिकी एवं प्रौद्योगिकी विभाग, प्रौद्योगिकी संस्थान, काशी हिंदू विश्वविद्यालय, वाराणसी-221005

अलग-अलग परिस्थितियों के लिए स्नेहक तेल अलग-अलग प्रकार व गुण-धर्म वाले होने चाहिए । अतएव इनका चुनाव करते समय सावधानी बरतने की आवश्यकता होती है । गलत स्नेहक तेल के प्रयोग से लाभ के स्थान पर हानि भी हो सकती है । इस्तेमाल किये गये स्नेहक तेलों को साफ करके पुन: इस्तेमाल लायक बनाया जाता है, परंतु इनकी गुणवत्ता घट जाती है । स्नेहक प्राकृतिक (पेट्रोलियम आधारित) एवं संश्लेषित दोनों ही प्रकार के मिलते हैं । संश्लेषित स्नेहकों में यथावश्यक गुणों को लाने के लिए विशेष योगजों / रसायनों का उचित मात्रा में समावेश करना पड़ता है । प्रस्तुत लेख में स्नेहन एवं स्नेहकों से संबंधित विभिन्न पहलुओं यथा उनके प्रकार, अनुप्रयोग इत्यादि की संक्षिप्त जानकारी दी गयी है ।

तेल, वसा, ग्रीज व अन्य रासायनिक यौगिकों द्वारा मशीनों के गतिशील हिस्सों के बीच के घर्षण व क्षरण (wear) को रोकने की प्रक्रिया स्नेहन कहलाती है । अत्यंत सावधानी पूर्वक तैयार की गयी धातुओं की सतहों के ऊपर भी सूक्ष्म उभार व गड्ढ़े होते हैं, जो एक सतह के ऊपर दूसरी सतह की गति को कम करते हैं । स्नेहन द्वारा इन गतिमान सतहों के ऊपर स्नेहक की एक पतली परत फैला दी जाती है जो उनके बीच के घर्षण को कम करती है । इससे पुर्जों का घिसना कम हो जाता है और साथ ही शक्ति का अपव्यय भी नहीं होता है । इस स्नेहन को द्रव-गतिकी स्नेहन या द्रव-स्नेहक कहते हैं । जर्नल बियरिंग में जर्नल तनाव (खिंचाव) के घूर्णन (rotation) के चलते जर्नल और बियरिंग को अलग करती है । इस अवस्था में काम करने वाला घर्षण, तेल की श्यानता, घूर्णन की गति एवं जर्नल पर लगाये गये भार पर निर्भर करता है । अगर जर्नल कुछ समय तक स्थिर अवस्था में रहने के उपरांत घूमना प्रारंभ करता है तो वह इतनी अधिक मात्रा में तेल नहीं खींच पाता है जो दोनों सतहों को एक-दूसरे से दूर रख सके । इस अवस्था में घर्षण काफी अधिक होता है तथा वह स्नेहक की श्यानता पर आश्रित नहीं होता है, वरन् केवल जर्नल पर लगने वाले भार व सतह पर शेष बचे तेल की परत के चलते होने वाली चिकनाई पर निर्भर करता है । इस अवस्था में जहां जर्नल और बियरिंग की सतहें स्नेहक की केवल आण्विक परत द्वारा विलग की गयी रहती हैं, बियरिंग के गर्म होने से उसकी सतह के खराब होने की संभावना अधिक होती है । इस कारण मशीनों का अभिकल्पन इस प्रकार किया जाता है ताकि स्नेहन हरदम द्रवगतिकी अवस्था में ही कार्य करें । जर्नल की खराबी को रोकने हेतु बियरिंग को मुलायम धातु का नहीं बनाया जा सकता है । स्नेहन की विफलता को रोकने हेतु कुछ उच्चदाब वाले रसायनों को स्नेहक में मिलाकर सुरक्षा परत (protective film) के निर्माण द्वारा गर्म स्थानों को बनने से रोका जाता है तथा इससे सतह की खराबी व जकड़न पर भी रोक लगती है ।

श्यानता व श्यानता सूचकांक (श्यानता-तापमान का संबंध) द्रव स्नेहकों के प्रमुख गुण-धर्म हैं । श्यानता सूचकांक जितना ही ऊंचा होगा तापमान के साथ श्यानता में परिवर्तन उतना ही कम होगा । कई परिस्थितियों में स्नेहक ऊष्मा स्थानांतरक का भी कार्य करता है जैसे गियर बॉक्स में डाला जाने वाला तेल और लेथ तथा ड्रिलिंग/मिलिंग मशीनों में प्रयोग किया जाने वाला कटिंग तेल । धातु की सतह पर स्नेहक की परत के चलते नमी व संक्षारण से रक्षा भी होती है । बुनाई की सलाइयों, बॉल व रोलर बियरिंग आदि को इसी प्रकार की परत द्वारा सुरक्षित रखा जाता है । स्नेहन के साथ-साथ स्नेहक तेल मशीनों को ठंडा रखने का भी कार्य करते हैं । साथ ही कई परिस्थितियों में ये टूट-फूट से बने धातु के छोटे-छोटे कणों को सतह से हटाने का कार्य भी करते हैं जिससे सतह की घिसाई कम होती है ।

हमारे शरीर के जोड़ों में भी स्नेहक पदार्थ होते हैं, जो हड्डियों के जोड़ों पर इधर-उधर घूमते समय स्नेहन का कार्य करते हैं । हड्डी के दो जोड़ों (जैसे घुटने) के बीच चिकनी सायनोवियल मेंब्रेन होती है । इसमें से सायनोविया द्रव निकलता है जो जोड़ों के बीच स्नेहक का कार्य करता है । इसमें कमी या खराबी होने पर जोड़ों में दर्द प्रारंभ हो जाता है ।

स्नेहक तेल व अन्य पदार्थ :

आधुनिक उच्च गति वाली मशीनों के प्रचलन के पूर्व स्नेहन की आवश्यकता की पूर्ति पशुओं अथवा वनस्पतियों से प्राप्त वसीय तेलों से पूरी हो जाती थी । अब पेट्रोलियम से उच्च कोटि के स्नेहक तेल प्राप्त होने लगे हैं, जो न तो शीघ्र अम्लीय होते हैं न ही विकृत-गंधी (rancid) । मिश्रित तेलों (खनिज तेल व रेपसीड तेल अथवा मत्स्य तेल) व मिश्रित स्नेहकों का उपयोग अब भी उन अवस्थाओं में होता है जहां जल के साथ इमल्सीकरण आवश्यक होता है, जैसे नम अवस्था में प्रयुक्त किया जाने वाला स्टीम सिलिन्डिर तेल अथवा निघर्षण (स्काउरिंग) के लिए प्रयुक्त वस्त्र तेल ।

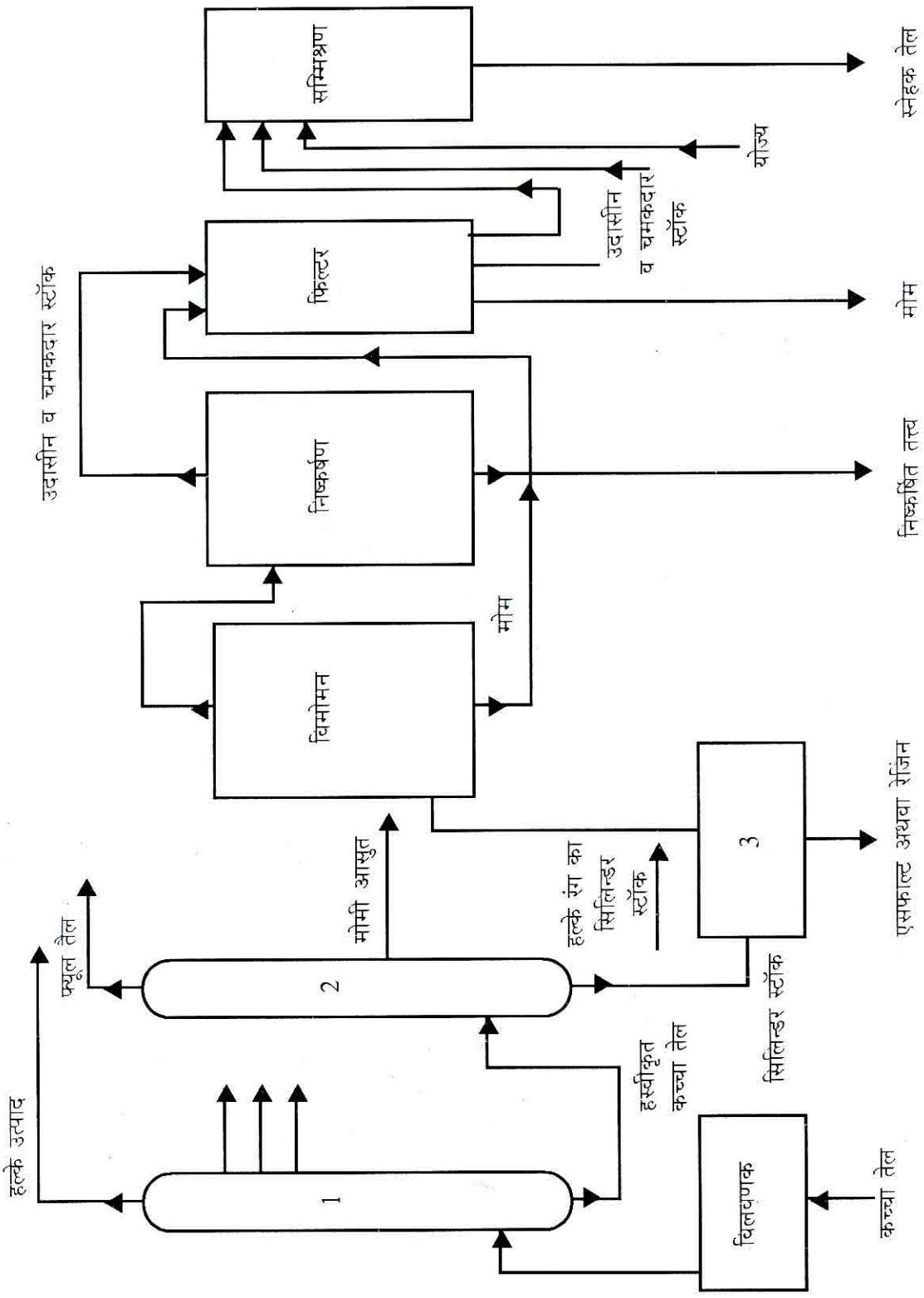

चित्र - 1 : कच्चे पेट्रोलियम से स्नेहक तेल उत्पादन का सरल रेखाचित्र - *(i) वायुमंडलीय टॉवर, (ii) निर्वात टॉवर, (iii) विरेजिनन अथवा विएसफाल्टन*

पेट्रोलियम आधारित स्नेहक :

स्नेहक तेल कई प्रकार के हो सकते हैं, पर मूलतः ये पेट्रोलियम के अंश हैं तथा कच्चे पेट्रोलियम के विशेष परिष्करण द्वारा तैयार किये जाते हैं। पेट्रोलियम से स्नेहक तेल प्राप्त करने के लिए कच्चे तेलों को पहले अनिर्वात व फिर निर्वात परिस्थितियों में आसवित किया जाता है। इसके बाद उनमें से रेजिन और

एसफॉल्ट को अलग किया जाता है। अंतिम चरण में विभिन्न योगजों (additives) को मिलाया जाता है। इनकी मात्रा 0.001 से 25% तक हो सकती है। कच्चे पेट्रोलियम तेल से स्नेहक तेल प्राप्त करने की प्रक्रिया चित्र-1 में दिखाई गयी है। पूर्वोपचार के उपरांत कच्चे तेल को वायविक मीनार (टॉवर) में भेजा जाता है। यहां कच्चा तेल अपने घटकों में विलग हो जाता है। हल्के उत्पादों को टॉवर के ऊर्ध्वभाग से व अन्य घटकों को मध्य एवं निचले भागों से निकाल लिया जाता है। इस टॉवर से प्राप्त होने वाले उत्पादों में ऋजुधाव गैसोलिन, नेफ्था, किरोसिन, डीजल, फ्यूल, ईंधन तेल आदि होते हैं, जिन्हें और अधिक परिष्करण के लिए संयंत्र के अन्य भागों में भेज दिया जाता है। न्यूनीकृत कच्चे तेल को निर्वात टॉवर में भेजा जाता है। न्यूनीकृत तेल में ही स्नेहक तेलों के आधारभूत घटक होते हैं। इसमें अल्प मात्रा में ईंधन तेल भी होता है।

स्नेहक तेलों के उत्पादन का मुख्य लक्ष्य है हल्के उत्पादों का प्रारंभिक पृथक्कीकरण एवं मोमी आसुत व सिलिन्डर स्टॉक का बिना तापीय भंजन के बिलगाव। इस प्रकार निर्वात आसवन इकाई के उपयोग द्वारा यह प्रक्रिया कम तापमान पर संपन्न करायी जाती है। निर्वात टॉवर से कुछ ईंधन तेल भी उत्पादित होता है जिसे या तो अलग उत्पाद के रूप में विक्रय किया जाता है अथवा और अधिक उपचार या ब्लेंडिंग के लिए अलग संयंत्र में ले जाया जाता है। मोमी आसुत (क्वथनांक-357 से 510 डिग्री सेल्सियस) टॉवर के मध्य से व सिलिन्डर स्टॉक उसकी तली से प्राप्त होता है। वांछित स्नेहक तेल इन्हीं दोनों घटकों से तैयार किये जाते हैं। मोमी आसुत को विमोमन इकाई में सीधे भेज दिया जाता है। तली से प्राप्त सिलिन्डर स्टॉक को रेजिन रहित या एसफॉल्ट रहित करने के लिए ले जाया जाता है। कच्चे पेट्रोलियम के आसवन से प्राप्त भारी आसुत व न्यूनीकृत तेल से स्नेहक तेल प्राप्त किये जाते हैं।

स्नेहक तेलों से मोम को पृथक करने के लिए मणिभीकरण का प्रयोग किया जाता है। इस प्रक्रिया में मोम सूक्ष्म या स्थूल मणिभों के रूप में पृथक हो जाती है। स्नेहक तेलों के गुणधर्म में सुधार के लिए विलायक निष्कर्षण एवं रासायनिक उपचार काफी समय से स्नेहक तेलों के उत्पादन में प्रयुक्त होते रहे हैं।

स्नेहक तेलों से कम श्यानता गुणांक वाले हाइड्रोकार्बनों, अस्थिर आपंक (स्लज) व रंगीन घटकों को विलग करने के लिए चयनित निष्कर्षण की विधि प्रयोग में लायी जाती है। निष्कर्षण सामान्यतया प्रतिधारा विधि द्वारा संपन्न किया जाता है। फरफ्यूरॉल आधारित निष्कर्षण विधि चित्र-2 में दिखायी गयी है। फरफ्यूरॉल रंगीन पदार्थों, गंधक युक्त यौगिकों व ऑक्सीजन युक्त यौगिकों को निष्कर्षित करने में सक्षम है।

विलायक व तेल के मध्य संपर्क हेतु निष्कर्षण स्तंभ का प्रयोग किया जाता है। उचित विलायक के प्रयोग द्वारा मिश्रण दो संस्तरों में विलग हो जाता है - एक में अधिक विलायक और अवांछनीय पदार्थ होते हैं तथा दूसरे में कम विलायक व वांछनीय तेल होता है। दूसरे संस्तर में मुख्यतः पैराफिनक यौगिक व मोम होते हैं। विमोमन हेतु या तो प्रोपेन या मिथिल इथिल कीटोन (MEK) का प्रयोग किया जाता है (चित्र-3)। अक्सर विएसफाल्टन भी इस परिशोधन का अंग होता है (चित्र-4)।

फरफ्यूरॉल को विलायक के रूप में प्रयोग करते समय निम्नलिखित प्रक्रिया अपनायी जाती है : सतत प्रतिधारा निष्कर्षण द्वारा स्नेहक स्टॉक का फरफ्लूरॉल के साथ संपर्क - यहां का तापमान कच्चे तेल के आधार पर 60-90 डिग्री सेल्सियस तक रखा जा सकता है।

रैफिनेट प्रभाज का निष्कर्षित (एक्सट्रैक्ट) प्रभाज से विलगाव, निर्वात वाष्पीकरण द्वारा रैफिनेट व परिष्कृत तेल से विलायक की पुनः प्राप्ति, जल-वाष्प आसवन द्वारा परिष्कृत तेल में से बचे हुए विलायक की निकासी, एक्स्ट्रैक्ट से वायुमण्डलीय या द्रावित आसवन द्वारा नम विलायक (फरफ्यूरॉल) की पुनःप्राप्ति आदि क्रियाएं संपन्न की जाती हैं। नम विलायक से प्रभंजन द्वारा शुष्क विलायक प्राप्त कर लिया जाता है, जिसे पुनः प्रयोग में ले लिया जाता है।

जल-वाष्प द्वारा निष्कर्षित प्रभाज में बाकी बचे विलायक को भी निकाल लिया जाता है। द्रव सल्फर डाई ऑक्साइड, प्रोपेन व क्रेसिलिक एसिड, डाइक्लोरो ईथर, फिनॉल व नाइट्रो बेन्जीन भी विलायक की तरह प्रयोग किये जाते हैं। प्रवाह बिंदु घटाने के लिए विलायकों के प्रयोग द्वारा तेल का विमोचन भी किया जाता है। सभी नम विलयनों से विलायक को अंतिम विलगन (स्ट्रिपिंग) द्वारा प्राप्त कर लिया जाता है। फरफ्यूरॉल को लगभग 15 बार तक पुनः चक्रमित कर प्रयोग में लाया जा सकता है। विलायक अत्यंत कम मात्रा (0.03 प्रतिशत) में क्षय होता है।

रासायनिक संरचना की दृष्टि से खनिज स्नेहक तेल अत्यंत जटिल यौगिक हैं। इनमें 20 से 70 कार्बन परमाणुओं वाले कार्बनिक यौगिक हो सकते हैं। इनमें संतृप्त एलिफैटिक यौगिक अत्यंत कम होते हैं। परंतु कुछ एरोमेटिक यौगिक हो सकते हैं। इनमें मूलतः साइक्लोपैराफिन व एरोमेटिक यौगिक भी होते हैं।

ब्लेंडिंग के दौरान इनमें ऑक्सीकरण-रोधक, संक्षारण-रोधक, जंग-रोधक, उच्चदाबसह पदार्थ, झाग को रोकने वाले पदार्थ, श्यानता (viscosity) को सुधारने वाले पदार्थ, कम तापमान पर प्रवाहशीलता रोकने वाले पदार्थ, डिटर्जेंट विस्तारण कारक, एन्टी-चैटर, एन्टीस्क्वैक पदार्थ मिलाये जाते हैं।

सोसायटी ऑफ ऑटोमोटिव इंजीनियर्स ने स्नेहक के वर्गीकरण के लिए एक "क्रमांक पद्धति" विकसित की है, जो श्यानता और तापमान के साथ उसके परिवर्तन पर आधारित

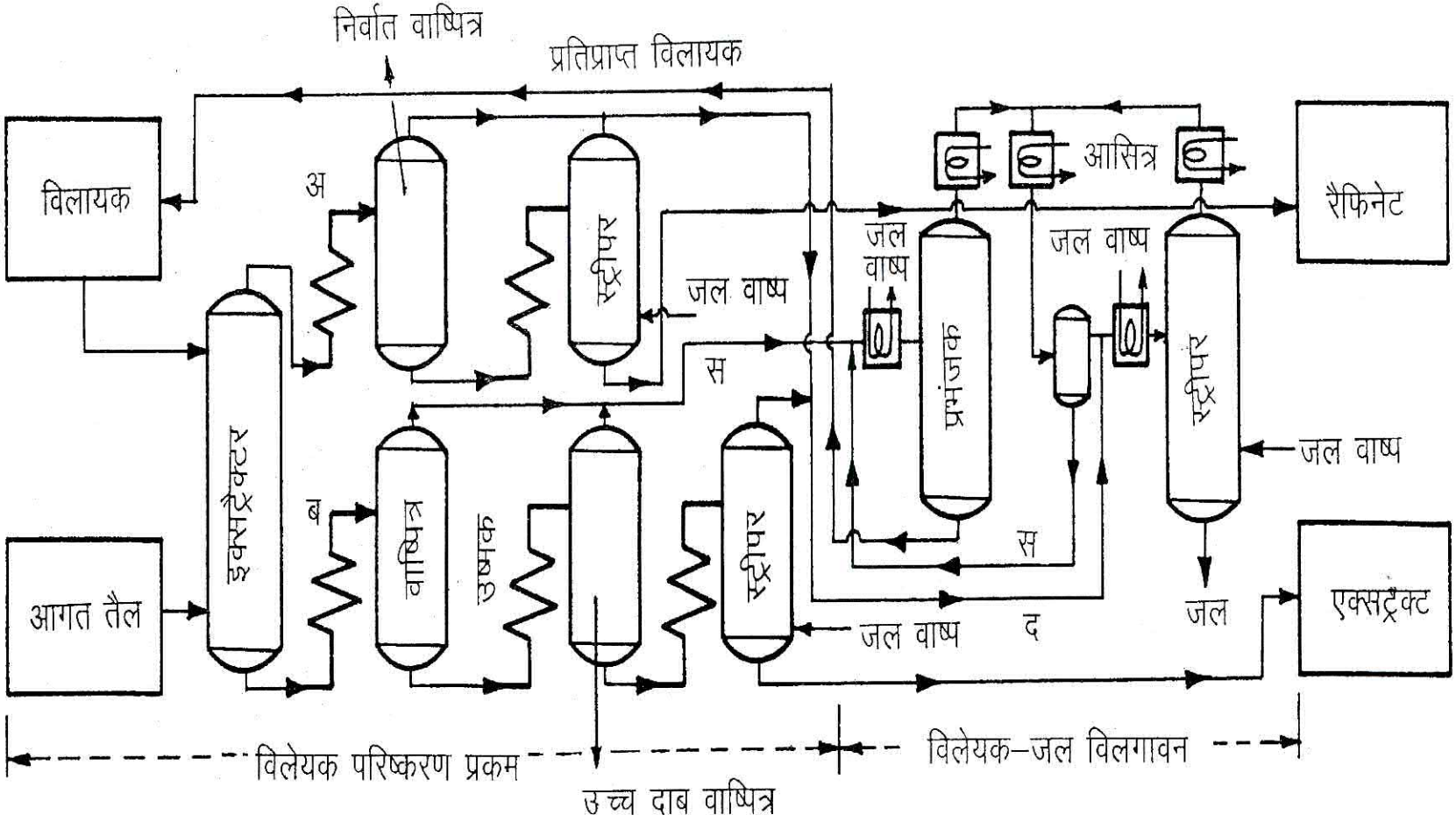

अ - रैफिनेट एवं विलायक, ब - विलायक निष्कर्ष एवं जल, स - जल संतृप्त विलायक, द - विलायक-संतृप्त जल

चित्र - 2 : फरफ्यूरॉल विलायक आधारित जल-विलायक विलगावन एवं पुनर्प्राप्ति प्रक्रम परिष्करण प्रणाली युक्त प्रक्रम

तालिका 1 : बाजार में उपलब्ध प्रमुख संश्लेषित स्नेहकों के गुणधर्म की तुलना

आधार तेल का प्रकार	स्नेहकता व क्षरणावरोध	द्रव परास	श्यानता गुणांक	योगजों के साथ सामंजस्य	ऑक्सीकरण के प्रति स्थिरता	ऊष्मीय स्थिरता	जलीय स्थिरता	अग्निरोधक क्षमता	पेट्रोलियम आधारित स्नेहकों के साथ सामंजस्य	पेन्ट, प्लास्टिक व इलास्टोमर के साथ सामंजस्य	लागत
प्रचलित	3	5	5	4	5	5	1	7	1	4	अति कम
संश्लेषित हाईड्रोकार्बन	3	3	3	2	3	3	1	7	1	3	मध्यम
ईस्टर	2	2	2	1	3	4	3	5	2	6	मध्यम
सिलिकॉन	7	1	1	7	3	3	2	5	7	3	अधिक
पॉली ईथर (पॉली-, अल्कीलिन ग्लायकॉल)	3	3	2	3	5	5	3	5	5	5	मध्यम
फॉस्फेट ईस्टर	1	5	5	3	4*	5	6**	2	3	7	मध्यम
सिलिकेट ईस्टर	5	1	1	5	5	2	7	5	5	5	अधिक
उच्च फ्लूरीनीकृत यौगिक	3	5	7	7	1	2	2	1	7	3	बहुत अधिक
पॉली एरोमेटिक (पॉली फिनॉल ईथर)	5	7	7	5	3	1	1	5	3	5	बहुत अधिक

1. सर्वोत्तम, 2. अति उत्तम, 3. उत्तम, 4. कम उत्तम, 5. साधारण, 6. कम खराब, 7. खराब ।

*धातुओं के लिए खासकर स्टील पर स्टील, ** विघटन के उत्पाद (अत्यंत संक्षारक)

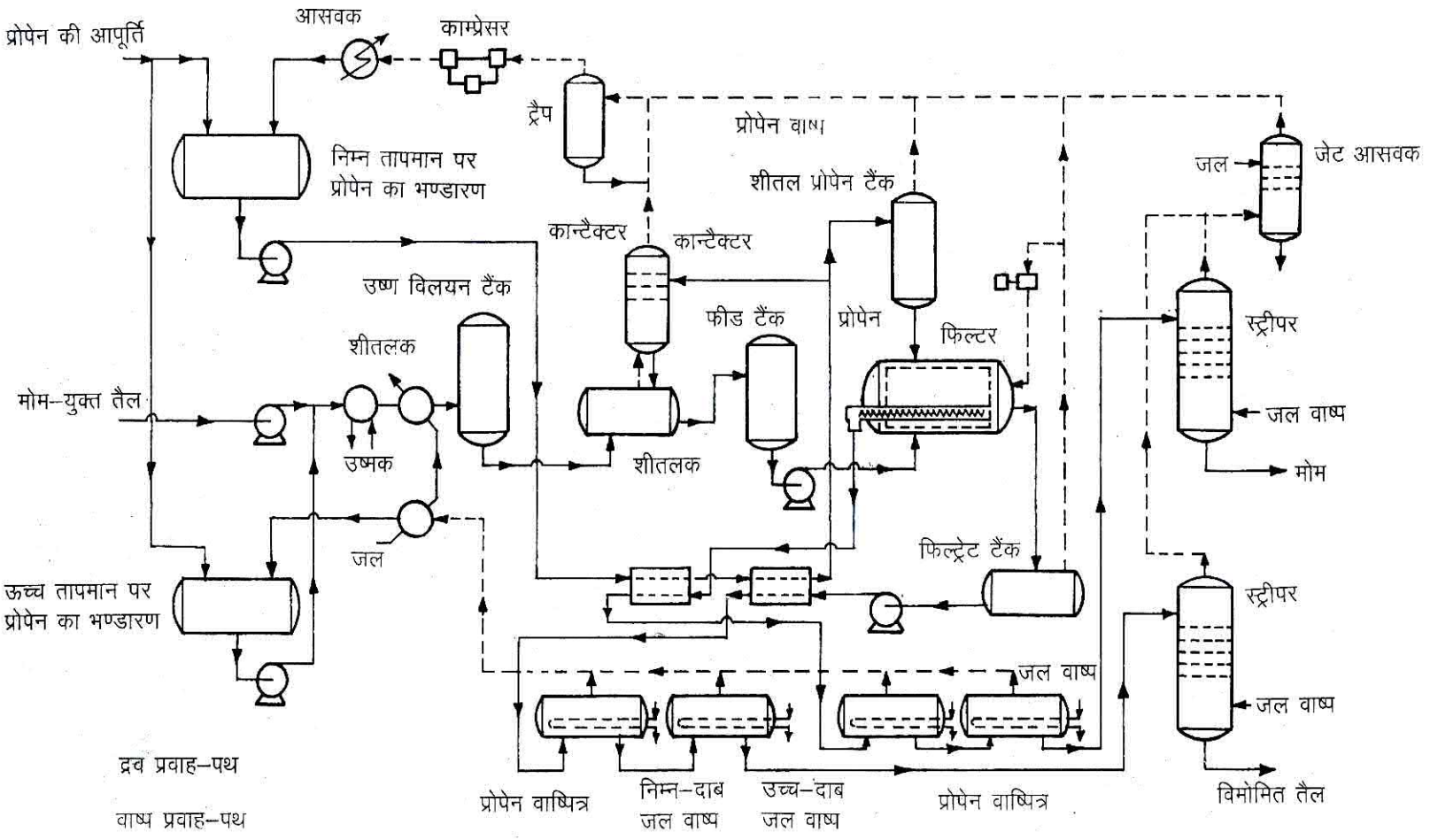

चित्र - 3 : स्नेहक तेल का विमोमन (के लॉग प्रोपेन प्रक्रम)

तालिका - 2 : संश्लेषित स्नेहकों के प्रकार

वर्ग	सामान्य सूत्र	उत्पादक
संश्लेषित हाइड्रोकार्बन	$[-CH_2-CH_2-CH_2-]_n$	कोनोको, मोबिल, शेल
डाइ ईस्टर	$R-O-\overset{O}{\overset{\|}{C}}-(CH_2)_n-\overset{O}{\overset{\|}{C}}-O-R$	हम्बल, मोबिल, टेन्नेको
नियोपेंटिल पॉली ऑल ईस्टर	$C-(CH_2-O-\overset{O}{\overset{\|}{C}}-R)_4$	डब्ल्यू. आर. ग्रेस, हरक्युलिस, हम्बल
सिलिकॉन	$\left[-\underset{n}{\overset{R}{Si}}-O-\right]_n$	डो-कॉर्निंग, जेनरल इलेक्ट्रिक, यूनियन कार्बाइड
पॉलीईथर (पॉली अल्कीलिन ग्यायकॉल)	$\left[-CH_2-\overset{R}{CH}-O-\right]_n$	डो, यूनियन कार्बाइड
फॉस्फेट ईस्टर	$R-O-\underset{\underset{R'}{O}}{\overset{O}{\overset{\|}{P}}}-O-R''$	मॉन्सैन्टो, स्टॉफर, टेन्नेको
सिलिकेट ईस्टर	$Si-(O-R)_4$	शेवरॉन, मॉन्सैन्टो
फ्लूरोनीकृत यौगिक (फ्लूरोकार्बन)	$CF_3-(CF_2)-CF_3$	डो-कॉर्निंग, डू पॉन्ट, हैलोकार्बन
पॉली एरोमेटिक (पॉली फेनिल)		मॉन्सैन्टों, शेल केमिकल

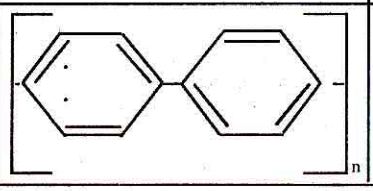

है। दहन का न्यूनतम तापमान, श्यानता, प्रवाहमान रहने के लिए न्यूनतम तापमान, इमल्सीकारकता व स्लज बनने की प्रवृत्ति के आधार पर स्नेहक तेलों के उपयोग तय किये जाते हैं।

संश्लेषित स्नेहक :

रासायनिक संश्लेषण द्वारा प्राप्त यौगिकों का वह विस्तृत समूह जो वनस्पतियों, जीवधारियों व पेट्रोलियम से प्राप्त स्नेहकों से भिन्न होते हैं, संश्लेषित स्नेहक कहलाता है। प्राकृतिक स्रोतों से प्राप्त स्नेहक विभिन्न यौगिकों का एक क्लिष्ट मिश्रण होता है, जिसकी संरचना स्रोत व परिष्करण के स्तर पर निर्भर करती है, जबकि संश्लेषित स्नेहक या तो शुद्ध यौगिक होता है, अथवा ऐसे यौगिकों को निश्चित मात्रा में मिलाकर बनाया गया मिश्रण होता है। पेट्रोलियम व पशुओं की चर्बी तथा वनस्पतियों से प्राप्त स्नेहकों की संरचना व विभिन्न घटकों की प्रतिशत मात्रा, कच्चे माल के स्रोत व प्रकार तथा परिष्करण के स्तर पर निर्भर करती है।

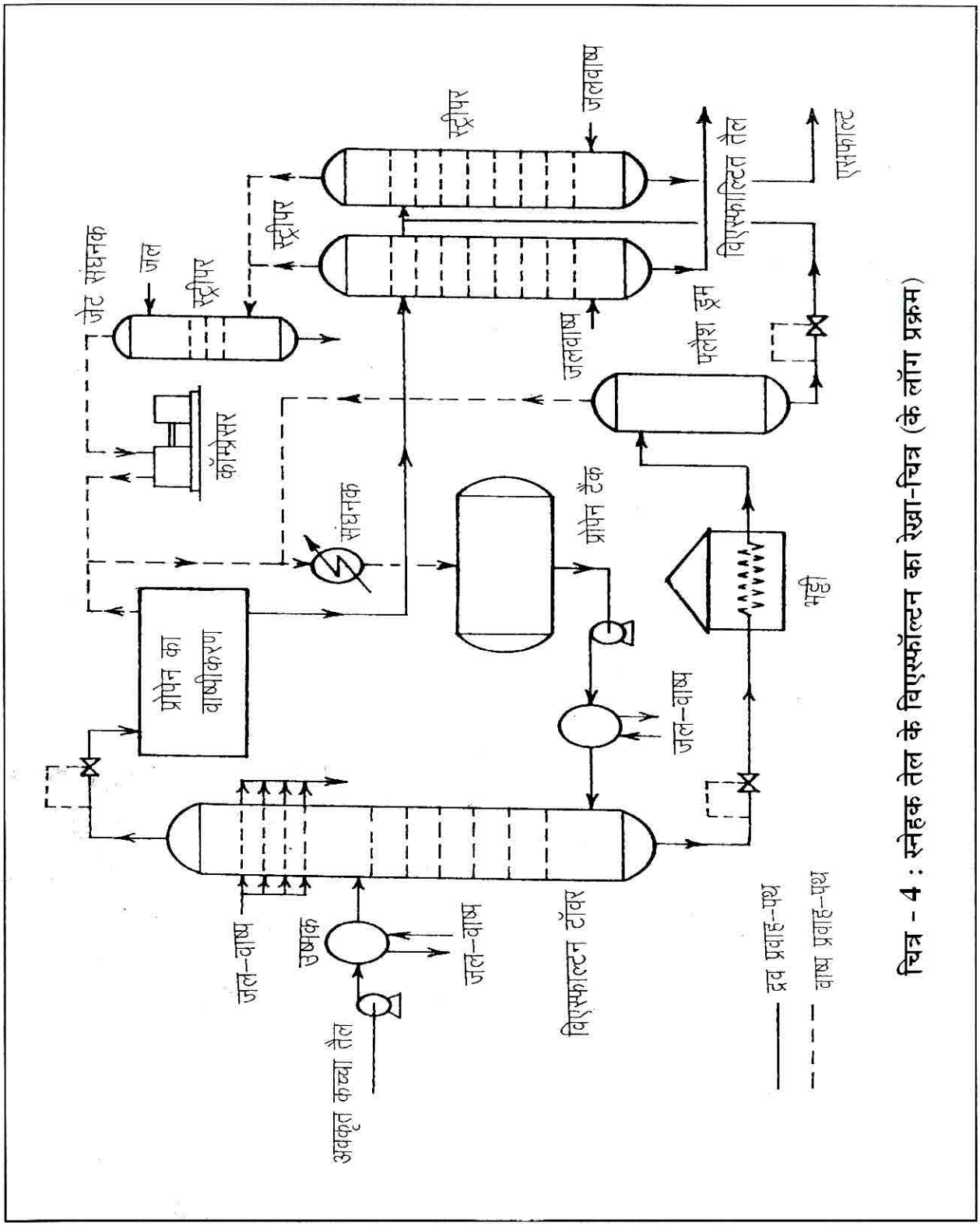

चित्र - 4 : स्नेहक तेल के विएस्फॉल्टन का रेखा-चित्र (के लॉग प्रक्रम)

संश्लेषित स्नेहकों की खोज में, उपलब्ध स्नेहकों की क्षमता बढ़ाने के प्रयासों, कुछ संश्लेषित रसायनों की उत्तम स्नेहन क्षमता तथा दूसरे महायुद्ध के दौरान पेट्रोलियम आधारित स्नेहकों की कमी ने, काफी योगदान किया है। 1934 में ऐसे संश्लेषित हाइड्रोकार्बनों की खोज की गयी, जो उत्तम स्नेहकों के गुणधर्म वाले थे। दूसरे महायुद्ध के पूर्व व उसके दौरान जर्मनी में हाइड्रोकार्बन व ईस्टर आधारित स्नेहकों पर काफी शोध कार्य किया गया। इन शोधों का मूल उद्देश्य पेट्रोलियम आधारित स्नेहकों की कमी को दूर करना, वायुयानों के इंजनों के लिए उपलब्ध स्नेहकों की अनुपयोगिता के चलते नये स्नेहकों की आवश्यकता को पूरा करना तथा जाड़े के दिनों में मोटर गाड़ियों व युद्ध के साजो-सामानों के लिए उपयुक्त स्नेहकों की आवश्यकता की पूर्ति करना था। दूसरे विश्व युद्ध के पश्चात् इंग्लैंड व संयुक्त राज्य अमरीका में टर्बोजेट व टर्बो इंजन वाले वायुयानों के लिए

ईस्टर आधारित स्नेहकों पर काफी शोध कार्य हुआ । इसके पश्चात् सिलिकॉन, फ्लूरोकार्बन, पॉलीएरोमेटिक्स, आदि प्रकार के स्नेहकों की खोज सफलता पूर्वक की गयी ।

संश्लेषित स्नेहकों के प्रकार :

संश्लेषित स्नेहक, संश्लेषित हाइड्रोकार्बन, कार्बाक्सिलिक अम्लों के ईस्टर, सिलिकॉन, पॉलीईथर (पॉली अल्काइलिन ग्लायकॉल), फॉस्फेट ईस्टर, सिलिकेट ईस्टर, अन्य फ्लूरीनीकृत यौगिक, या पॉलीएरोमेटिक प्रकार के यौगिक हो सकते हैं । तालिका-1 में इनके सूत्र व उत्पादकों के नाम संकलित किये गये हैं । इन स्नेहकों में अन्य योगजों (0.001-25 या अधिक) को मिलाया जाता है ताकि इनके गुणधर्म में सुधार हो सके । कुछ यौगिकों पर योगजों का प्रभाव अत्यंत अच्छा होता है तथा उनकी स्नेहन क्षमता व गुणधर्म में अपेक्षाकृत अधिक सुधार होता है । योगजों का वर्गीकरण उनके द्वारा किये गये प्रभाव पर निर्भर करता है, यथा-ऑक्सीकरण रोधक, क्षरण रोधक, डिटर्जेंट, उच्च दाब सह, झाग रोधक, श्यानता गुणांक सुधारक । चलने के स्नेहक में इनकी मात्रा 0 से 15 प्रतिशत तक हो सकती है । तालिका-2 में मिश्रित स्नेहकों के गुणधर्म दिये गये हैं ।

अनुप्रयोग :

प्रारंभ में संश्लेषित स्नेहकों का प्रयोग उन विशेष परिस्थितियों में ही किया जाता था जहां पेट्रोलियम आधारित स्नेहक कार्य कर सकने में अक्षम सिद्ध होते थे । क्योंकि इनकी लागत अधिक होती है । इस प्रकार का उपयोग आज भी प्रचलित है खासतौर से तब जबकि स्नेहक उच्च तापमान, रेडियोधर्मी विकिरण अथवा ऑक्सीकारकों से युक्त स्थानों पर प्रयोग किये जाने होते हैं । इसके बावजूद उपकरण की दीर्घ आयु, उनके बंद अवस्था में रहने की अवधि में कमी और स्नेहन की दीर्घकालिक लागत में कमी के मद्देनजर ऐसे स्नेहकों का उपयोग बढ़ा है । प्रचलित उपकरणों में इन स्नेहकों के उपयोग से उत्पाद की प्रारंभिक लागत कुछ बढ़ जायेगी परंतु इस्तेमाल के दौरान कम खर्च तथा उत्पादक के पास शिकायतें भी कम आयेंगी । वायुसेना व नागर विमानन हेतु उपयोग किये जाने वाले टर्बोजेट इंजनों में इन स्नेहकों का सर्वाधिक उपयोग होता है । इन इंजनों में प्रयोग हेतु स्नेहक को अवाष्पशील, उच्च तापमान श्यानता गुणांक तथा अधिक भार वहन करने वाली क्षमता का होना चाहिए । पेट्रोलियम से प्राप्त स्नेहकों से इन आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं होती है ।

टर्बोजेट इंजनों में या तो डाईईस्टर आधारित तेल (MIL-78045 मानक वाले) अथवा नियोपेन्टिल पॉलीऑल ईस्टर (MIL-L-23699) स्नेहकों का प्रयोग 149 से 204 डिग्री से. (तेल का औसत तापमान) तक होता है । नियोपेन्टिल ईस्टर का प्रयोग ऊंचे तापमान व अधिक भार वहन कर सकने वाली परिस्थितियों में किया जाता है । रोटरी वेल, रेसिप्रोकेटिंग व हेलिकल स्क्रू कंप्रेसर में भी संश्लेषित स्नेहकों का प्रयोग किया जाता है । इन कंप्रेसरों में पंक बनने व सतह पर लैकर की परत जमा होने से रोकने के लिए पेट्रोलियम आधारित स्नेहक को प्रति 500 घंटे बाद बदलना होता है तथा 2000 घंटे पश्चात् कंप्रेसर को बंद कर सफाई करनी पड़ती है । परंतु यह देखा गया है कि डाईईस्टर आधारित स्नेहक के प्रयोग करने से 4000 घंटे तक चलने के पश्चात् भी न तो पंक बना न ही सतह पर परत चढ़ी । अपेक्षाकृत कम परिचालन तापमान व कम तेल की खपत इनकी दूसरी विशेषताएं हैं ।

ग्रीज :

इस वर्ग के अंतर्गत खनिज तेल एवं ठोस स्नेहकों के मिश्रण, मोम, वसा, रेजिन तेल एवं पिच का मिश्रण तथा साबुन युक्त खनिज तेल आते हैं । इसके साथ ही कार्बनिक (जैसे साबुन या विरंजक) अथवा अकार्बनिक (सिलिका, मृदा) जैसे जेलीकारकों को मिश्रित कर ग्रीज बनाये जाते हैं ।

ठोस स्नेहक :

बोरॉन नाइट्राइड (BN) हल्का सफेद पाउडर है । इसका उपयोग दाब वाली बियरिंग स्नेहक की तरह किया जाता है । पेंटा इरीथ्रीटॉल ($C(CH_2OH)_4$) को स्नेहकों में योगज के रूप में इस्तेमाल किया जाता है । कुछ परिस्थितियों में ग्रेफाइट के पाउडर को भी स्नेहक की तरह प्रयोग में लाते हैं । मालिब्डेनम डाई सल्फाइड (MoS_2) का व्यापक प्रयोग नायलॉन की स्नेहकता, शक्ति व ऊष्मीय गुण को सुधारने में किया जाता है ।

फॉस्फेट ईस्टर स्नेहकों को अग्निरोधी हाइड्रॉलिक द्रव के रूप में, ग्लायकॉल को ब्रेक द्रव के रूप में, फ्लूरोसिलिकॉन को गैस कंप्रेसर द्रव व पॉलिफिनायल को विकिरणरोधी के रूप में प्रयोग किया जाता है । इनकी संरचना स्रोत व परिष्करण के स्तर पर निर्भर करती है । फ्लूरोसिलिकॉन द्रव की स्नेहक क्षमता काफी उत्तम है । इनकी उत्तम स्नेहकता एवं रासायनिक असक्रियता के चलते रसायन उद्योगों में इसका व्यापक प्रयोग किया जाता है । कंप्रेसरों में उनके प्रयोग के कारण रख-रखाव के खर्च में भारी कमी आयी है । ये या तो अकेले प्रयोग किये जाते हैं अथवा गाढ़ा बनाने के लिए मिश्रित कर ग्रीज के रूप में ।

डाइ इथिलिन ग्लाइकॉल ($HOCH_2CH_2OCH_2CH_2OH$) विभिन्न प्रकार के प्राकृतिक एवं संश्लेषित रेशों के लिए स्नेहक का कार्य करता है । मॉलिब्डेनम डाईसल्फाइड (MoS_2) नायलॉन की स्नेहकता, उसकी मजबूती तथा ऊष्मीय गुणधर्म को समुन्नत करने में उपयोगी है ।

नैनो प्रौद्योगिकी का रोमांचक भविष्य

डॉ. गोविंद प्रसाद कोठियाल

अध्यक्ष, कांच एवं सिरामिक्स प्रौद्योगिकी अनुभाग, तकनीकी भौतिकी एवं प्रारूप इंजीनियरी प्रभाग,
भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, मुंबई - 400 085.

'छोटे में सुंदरता है, लेकिन सूक्ष्मतम सुंदर होने के साथ-साथ अत्यंत उपयोगी भी होता है', यह उक्ति इस बात से सिद्ध होती है कि आज नैनो साइज के पदार्थ एवं युक्तियां मानवोपयोगी अनेक संभावनाओं को वास्तविकता के करीब लाने में अपनी उल्लेखनीय भूमिका प्रदर्शित कर रही हैं। प्रकृति द्वारा स्वत: समायोजन प्रणाली यानी परमाणुओं-अणुओं को सुनियोजित ढंग से लगाकर संरचना करना एक सहज बात है, जिससे प्रेरित होकर वैज्ञानिक वर्ग (भौतिक शास्त्री, रसायनशास्त्री एवं जैव शास्त्री) आज ऐसी सूक्ष्मतम संरचनाओं को बनाने में लगा है जो जीवन को एक नया आयाम देगा। ऐसी सूक्ष्मतम संरचनाएं जिनका माप एक मीटर के अरबें भाग अथवा हमारे बाल की मोटाई के हजारवें भाग के लगभग होती हैं नैनो संरचनाएं कहलाती हैं। ये संरचनाएं आम माइक्रोस्तर की संरचनाओं के मुकाबले बेहतर गुणों तथा कार्यशीलता को प्रदर्शित करती हैं। भविष्य में इनकी विज्ञान एवं जन जीवन पर क्रांतिकारी एवं रोमांचक छाप पड़ने की संभावना है जिसके मद्देनजर इस नैनो विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी पर सारे विश्व में सरकारें अत्यधिक घन लगाने पर बिल्कुल भी देर नहीं करना चाहती हैं। आखिर यह विज्ञान और प्रौद्योगिकी क्या है ? इसके प्रभाव किन किन क्षेत्रों में महत्त्वपूर्ण होंगे ? और किस प्रकार यह भविष्य के लिए अनगिनत आयामों को प्रस्तुत करेगी ? इत्यादि पहलुओं पर इस लेख में कुछ प्रकाश डाला गया है।

जब कभी भी आपने टेलीविजन के माध्यम से अथवा खुद दिल या अन्य किसी अंग के आपरेशन को होते हुए देखा होगा तो आप जरुर यह कल्पना करते होंगे कि क्या कभी ऐसा भी दिन आयेगा, जब खून से लथ-पथ, भयावह दृश्य के स्थान पर कुछ ऐसा हो कि रुधिर वाहिकाओं से सूक्ष्म पनडुब्बियों (युक्तियों) को प्रवेश करा कर सरलता से आपरेशन किया जा सके। इसके अलावा जब कभी आप किसी बीमारी के लिए दवा लेते हैं तो अवश्य यह ख्याल आता होगा कि दर्द तो सर में है या पैर में, तो फिर दवाई पेट में क्यों ? और इसी दवाई को जब पेट के माध्यम से गुजरना पड़ता है तो कई दुष्प्रभाव भी सामने आते हैं। यदि यही दवा बिना किसी अन्य भाग को प्रभावित किये सीधे गंतव्य स्थल पर पहुंच सके तो कितना अच्छा होगा। इस बात से तो आप सभी सहमत होंगे कि वैज्ञानिक नित नयी खोजों के द्वारा हमारे सामने हर बार एक नया आश्चर्य प्रस्तुत करने में सफल रहे हैं। इस विचित्र ब्रह्मांड में असंख्य विचित्रताएं हैं और वैज्ञानिक सदैव से प्रकृति की इन विचित्रताओं, घटनाओं के बल पर देर-सबेर हमारे लिए उपयोगी साधन जुटाने में सफल होते रहे हैं। पहले इलेक्ट्रॉनिकी फिर कंप्यूटर और अब सूचना तकनीकों ने हमारे जीवन में जो क्रांति लायी है हम उसे ही बेमिसाल समझने लगे हैं। परंतु विकास कहीं पर नहीं ठहरता। मानव की रुधिर वाहिकाओं में भ्रमण करने वाली सूक्ष्मतम पनडुब्बियों की हमारी कल्पनाओं को साकार बनाने के उद्देश्य से वैज्ञानिक अब हमें नैनो तकनीक के अभिनव संसार में ले जाने की तैयारी में हैं। हालांकि, सोचते हुए कुछ अजीब तो लगता है परंतु भविष्य इसी ओर संकेत कर रहा है।

क्या है यह नैनो विज्ञान और तकनीक ?

वैज्ञानिक परिभाषा के अनुसार एक नैनोमीटर, एक मीटर का एक अरबवें भाग अथवा एक मिलीमीटर के दस लाखवें भाग के बराबर होता है। ग्रीक भाषा में नैनो (nanos) का अर्थ है 'बौना'। आज की वैज्ञानिक मान्यता के आधार पर नैनो तकनीक परमाण्विक, आण्विक एवं नैनो स्तर पर पदार्थों में फेरबदल करने, उनका समायोजन, संश्लेषण, चरित्रीकरण, निर्माण एवं अवलोकन के साथ-साथ कार्यशील संरचनाओं एवं युक्तियों के विज्ञान एवं इंजीनियरी को कहा जाता है। उल्लेखनीय है कि परमाणु का आकार लगभग 1 - 4 आंग्स्ट्रॉम (10^{-8}सेमी.) होता है जबकि हाइड्रोजन परमाणु का माप एक नैनोमीटर के दसवें भाग के लगभग पाया जाता है। यदि इसकी तुलना सामान्य वस्तु, जैसे बाल से करें तो, नैनो स्केल, बाल के माप से लगभग दस हजार से लाख गुना कम होता है क्योंकि बालों की मोटाई उसके रंग, उगने की जगह एवं प्रकार के हिसाब से 10-100 माइक्रॉन के बराबर पायी गयी है। आम व्यक्तियों के लिए इन गणितीय परिमापों को छोड़ कर यह समझाया जाये कि यह पदार्थ के सबसे सूक्ष्मतम भाग के बराबर है जिसको वर्तमान

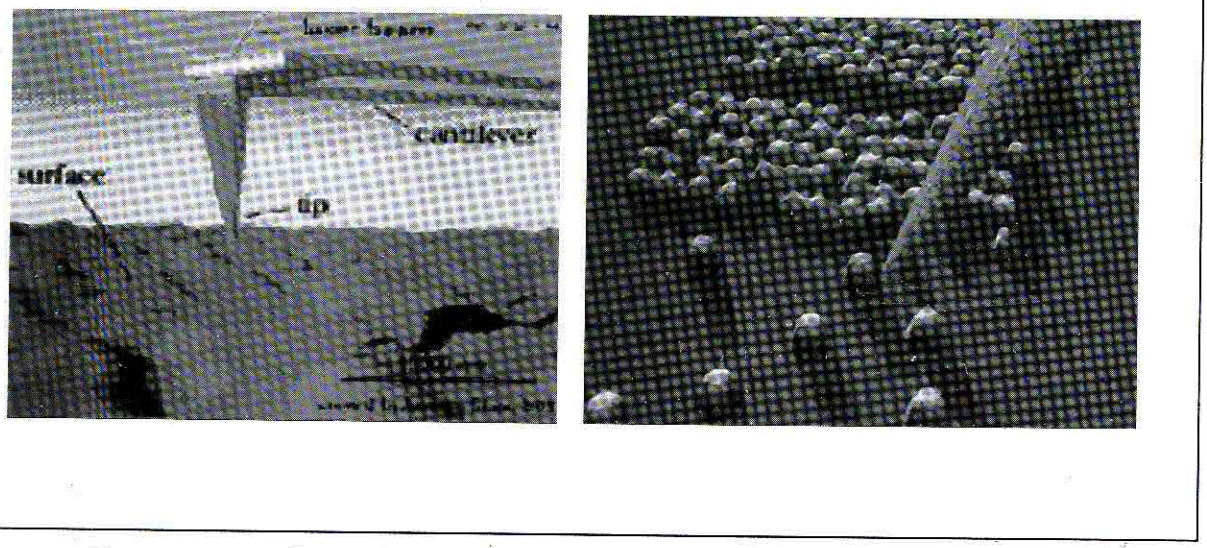

चित्र - 1 : क्रमवीक्षण प्रोब युक्तियां : क्रमवीक्षण टनलिंग सूक्ष्मदर्शी (एस.टी.एम.) तथा परमाण्विक बल सूक्ष्मदर्शी (ए.एफ.एम.)

जानकारी के आधार पर नियंत्रित रुप से संभाल सकते हैं, उसमें फेरबदल कर सकते हैं तो अधिक उपयुक्त रहेगा ।

यूं तो नैनो का विचार नया नहीं है । लगभग पचास साल (1959) पहले अमरीकी नोबेल पुरस्कार विजेता रिचर्ड फाइनमैन ने कहा था - "There is plenty of room at the bottom" । इसका अर्थ था कि यदि हम परमाणु से शुरु कर उन्हें मिलाकर पदार्थ को बनायें यानि अतिसूक्ष्म से बड़े की ओर बढ़ें तो प्रकृति में बनने वाले पदार्थों के काफी करीब होंगे । 'नैनो तकनीक' नाम सबसे पहले 1974 में टोक्यो विज्ञान विश्वविद्यालय के प्रो. नोरियो टॉनिगुचि ने दिया, जिसमें उन्होंने नैनोमीटर की शुद्धता के साथ पदार्थ तैयार करने का संदेश दिया था । इसके प्रमाण भी हैं कि नैनोकणों का उपयोग रोमन तथा चायनीज हजारों वर्षों से करते आ रहे हैं । जब-जब हम एक माचिस की तीली जलाते हैं, फुल्लरीन अणु बनता है । कार्बन ब्लैक का उपयोग 1920 से टायरों के घिसने की प्रतिरोधन क्षमता को बढ़ाने में होता आ रहा है । फाइनमैन की बहुमूल्य दूरदर्शी उक्ति को सही तौर पर बल तब मिला जब 1996 में रिचर्ड ई. स्मैली, रॉबर्ट एफ. कर्ल तथा सर हेरॉल्ड डब्ल्यू क्रोटो को उनकी फुल्लरीन की खोज को नोबेल पुरस्कार के लिए चुना गया ।

वस्तुतः नैनो विज्ञान अन्य वैज्ञानिक विषयों की तरह ही एक और विषय है जिसमें हम यह जानना चाहते हैं कि प्रकृति किस प्रकार काम करती है । इसमें कोई संदेह नहीं है कि प्रकृति पदार्थ में अत्यंत ऊर्जा दक्ष तरीकों को अपनाती है, उन्हें सही तौर पर प्रचालित करके उनकी देखभाल करने में पूरी तरह से सक्षम है । इसके विपरीत आदमी द्वारा प्रयुक्त तरीके काफी प्राथमिक

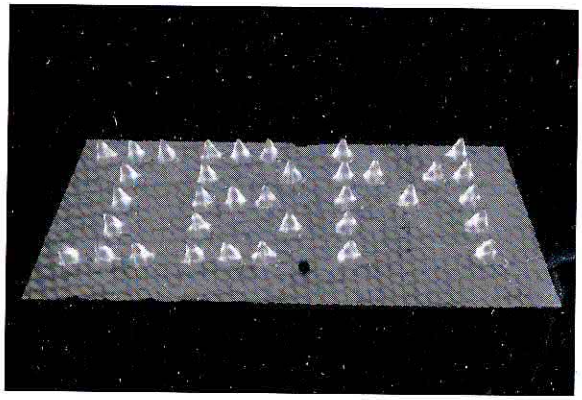

चित्र - 2 : क्रमवीक्षण टनलिंग सूक्ष्मदर्शी की परमाण्विक हेरफेर की क्षमता द्वारा 35 जीनॉन परमाणुओं से लिखा गया आई.बी.एम. (IBM)

स्तर के हैं । आज जो हम नैनो की बात करने लगे हैं, वह इसलिए कि अब परमाण्विक स्तर पर हमारी पदार्थ के बारे में समझ तथा उन्हें देखने की क्षमताओं में कुछ वृद्धि हुई है । सन् 1989 में डॉन इग्लर ने क्रमवीक्षण प्रोब सूक्ष्मदर्शी (स्कैनिंग प्रोब माइक्रोस्कोप) (चित्र-1) की सहायता से जीनॉन (xenon) के परमाणुओं को लेकर उन्हें एक-एक करके IBM शब्द के रुप में समायोजित करके परमाण्विक स्तर पर परमाणुओं के फेरबदल करने की हमारी क्षमता को प्रदर्शित किया (चित्र-2) । इसी प्रकार इस यंत्र की सहायता से नैनो संरचना के बारे में बारीकी से जानकारी हासिल की जा सकती है (चित्र-3) ।

बहरहाल प्रकृति की नैनो यांत्रिकी (उदाहरण के तौर पर वायरस जीव) इतनी प्रबल एवं प्रगत है कि वह न केवल प्रतिकृतियां तैयार कर सकती है बल्कि उनके विरुद्ध मानव निर्मित पदार्थों से बच निकलने के लिए यथावश्यक परिवर्तन भी कर सकती है। जीनोमिक्स एवं प्रोटीनोमिक्स के क्षेत्र में तो हमारा ज्ञान व समझ प्रकृति के मुकाबले एकदम गौण है।

यह प्रश्न सामने आता है आखिर इस नैनो तकनीक विज्ञान में क्या है जो हमें इस ओर इतना आकर्षित कर रहा है। पिछली शताब्दी में इलेक्ट्रॉनिकी, माइक्रोइलेक्ट्रॉनिकी एवं प्रकाश इलेक्ट्रॉनिकी के क्षेत्रों में हुए विकासों से यह स्पष्ट हुआ कि युक्तियों के आकार छोटे होने से संगणन गति एवं स्मृति में अप्रत्याशित वृद्धि होती है जो क्वांटम स्तर की अतिसूक्ष्म संरचनाओं के कारण है। इसी प्रकार आज नैनो पदार्थों के भौतिक-रासायनिक एवं जैविक व्यवहार, माइक्रोस्तर के पदार्थों से एकदम भिन्न होते हैं। उदाहरण के तौर पर 6 नैनोमीटर के तांबे (कॉपर) के एक कण की कठोरता आम तांबे के कण से 5 गुना अधिक पायी गयी, कार्बन नैनोट्यूब तथा नैनोट्यूब कंपोजिट फाइबर स्टील के तारों से कई गुना अधिक मजबूत पाये गये। कैडमियम सेलेनाइड (CdSe) के कणों के आमाप में कमी के साथ-साथ उसमें विभिन्न तरंगदैर्घ्य के प्रकाश उत्सर्जन की क्षमता पायी गयी है। प्रकृति में कमल की पत्तियों का एक अद्‌भुत गुण यह है कि इन पर पानी नहीं ठहरता है। यह वस्तुतः उनमें प्रकृति प्रदत्त दोहरे खुरदरेपन के कारण होता है। नैनो तकनीक के माध्यम से आज ऐसी संरचना तैयार करने में सहायता मिली है जो इस गुण को प्रदर्शित करने में सक्षम है। इसके लिए वैज्ञानिकों ने एक ऐसा लेपन तैयार किया जिसमें सिलिका (कांच) के सूक्ष्म गोलों से बने रसभरी की तरह के कणों को एक पॉलीमर आधारित फिल्म पर चिपकाया गया था। इसके अलावा पदार्थों के नैनो आकार के कणों में अप्रत्याशित सक्रियता पायी जाती है, जिससे कुछ अभिनव क्रांतिकारी प्रभाव भी प्रदर्शित होते हैं। ये वैज्ञानिकों के लिए काफी महत्वपूर्ण सिद्ध हुए। इनका संबंध जीवन विकास, शरीर प्रतिरक्षा तंत्र और प्रकृति की विभिन्न परिघटनाओं से है। यहां पर यह उल्लेखनीय है कि एक सरल जीव को सही तौर पर बनाने में प्रकृति को लगभग 50 करोड़ वर्ष का समय लगा, परंतु जब यह संरचना तैयार हुई तो एक आदर्श मशीन के रूप में कार्य करने में सक्षम पायी गयी। प्रकृति की एक ऐसी प्रणाली, जिसने विकास के लिए लगभग 350 करोड़ वर्ष लिये हैं, ने परमाणुओं तथा अणुओं के संयोग से डी. एन. ए. जैसे महत्वपूर्ण पदार्थ को तैयार किया है, जिसमें जीवन के संपूर्ण गुण निहित हैं। और इसी के बल पर बैक्टीरिया, चींटियां और यहां तक कि मानव भी बना है।

नैनो पदार्थ कैसे बनते हैं ?

आधुनिक विज्ञान के क्षेत्र में दो तरह से पदार्थ निर्माण का कार्य होता आ रहा है। कुछ वैज्ञानिकों ने अभीष्ट पदार्थ को बड़े से छोटे की ओर जाकर यानी पहले बड़ी स्थूल संरचनाएं तैयार कीं और कालांतर में उनके आकार को तब तक कम करते गये जब तक कि उसमें निर्दिष्ट क्रिया की सीमा न आ जाये। इसके विपरीत कुछ वैज्ञानिकों ने सूक्ष्मतम मौलिक इकाइयों को जोड़कर बड़ी संरचनाएं बनायीं। पहले प्रकार की पद्धति में उदाहरण के तौर पर अर्द्धचालक (सेमीकंडक्टर) तकनीक एवं उसके उपयोग हैं। आरंभ में एक चिप में एक ट्रांजिस्टर या डायोड बनाकर युक्तियां तैयार करने की क्षमता थी। 1969 तक 1 सेमी. x 1 सेमी. के आकार की चिप में लगभग 1000 घटक ही होते थे जो प्रतिवर्ष दुगने होने की दर से बढ़ते गये और आज माइक्रो-इलक्ट्रोनिकी युक्तियों के कर्णधार के रूप में सामने आये। आज यह बढ़कर 64-बिट चिप तक बनाने की क्षमता हो गयी है। इनका उपयोग सर्वर, डेस्कटॉप, लैपटॉप जैसे उपकरणों में होने से इन उपकरणों की गति में अकल्पनीय तेजी आ गयी है। चूंकि इस तरह बड़े से छोटे की तरफ जाने की पद्धति में एक ऐसा पड़ाव आ गया है जब 'क्वांटम यांत्रिकीय' प्रभाव - 'टनलिंग' की परिघटना से उन युक्तियों की क्रियाशीलता को समाप्त करने लगी है। अतः वैज्ञानिकों की अणुओं / परमाणुओं को जोड़-जोड़ कर क्रियात्मक अतिसूक्ष्म युक्तियों को बनाने की दूसरी सोच भविष्य की दिशा बन रही है।

वैज्ञानिकों को यह बात धीरे-धीरे स्पष्ट होने लगी है कि अतिसूक्ष्म इलेक्ट्रॉनिकी की वर्तमान सी-मॉस (C-MOS) तकनीक का अंतिम पड़ाव काफी करीब आ गया है। यह लगभग 100 आंग्स्ट्रॉम है। जब हम वॉन न्यूमैन इलेक्ट्रॉनिकी की अनिश्चितता सिद्धांत की सीमा (लगभग 20 आंग्स्ट्रॉम) और इस पर विचार करते हैं तो यह बात स्पष्ट हो रही है कि युक्तियों को प्रचलित तरीके से केवल छोटा करने से कोई लाभ नहीं होगा। इसलिए हमें प्रकृति की स्व-समायोजन प्रणाली (चित्र-4) को अपनाना होगा। यानी बॉटम-अप क्षमता से ही सही हल मिल सकेगा। इसके लिए नैनोइंप्रिंटलीथोग्राफी द्वारा तैयार साँचों (आधार) के साथ-साथ रोटॉक्सेन जैसे अणुओं और पॉलीमरों की नैनो स्तर पर कार्यविधि को समझकर इस कार्य में अपनाना होगा। इस विषय की ताजी तथा सही समझ ही हमें कुछ अभिनव संरचनाओं को बनाने की दिशा दे सकती है। परिणाम स्वरूप नैनोस्तर की युक्तियों से संबंधित नये उद्योग भी पनपने लगेंगे। यह ठीक उसी प्रकार होगा जैसे कि हमारे यह समझने से कि चालक में विद्युत विभव से इलेक्ट्रॉन किस प्रकार चलता है, बिजली, टेलीफोन, कंप्यूटर, इंटरनेट इत्यादि से संबंधित अनेकानेक उद्योग विकसित हुए।

स्व-समायोजन की प्रक्रिया 21वीं सदी में उतनी ही महत्वपूर्ण निर्माण विधि के रूप में उभर रही है जितनी 20वीं सदी के दौरान मिश्रधातुओं (एलॉय), प्लास्टिक तथा अर्ध धातु चालकों (आधुनिक इलेक्ट्रॉनिकी के कर्णधार) की निर्माण विधियां रही हैं। इन सभी पदार्थों में प्रचलित सह, आयनिक तथा धात्वीय

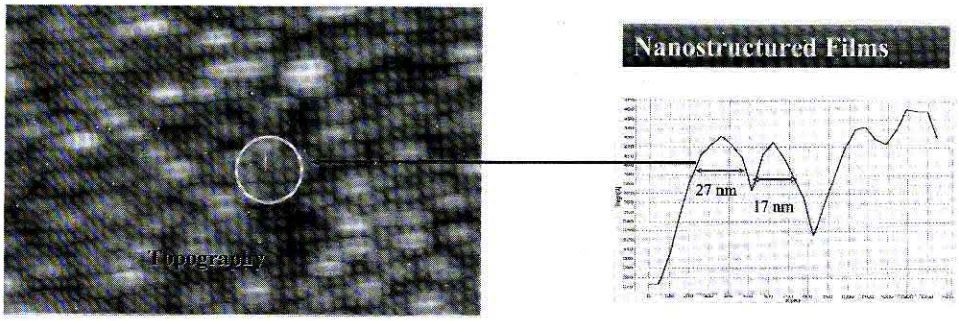

चित्र - 3 : परमाण्विक बल सूक्ष्मदर्शी (एटोमिक फोर्स माइक्रोस्कोप) द्वारा लिये गये एक नैनो संरचना वाली तनुफिल्म की सतह की टोपोग्राफी एवं फ़ेज प्रतिबिंबन के छायाचित्र । टोपोग्राफ की सहायता से उचित सॉफ्टवेयर का प्रयोग करके कण के आमाप की गणना की गयी है ।

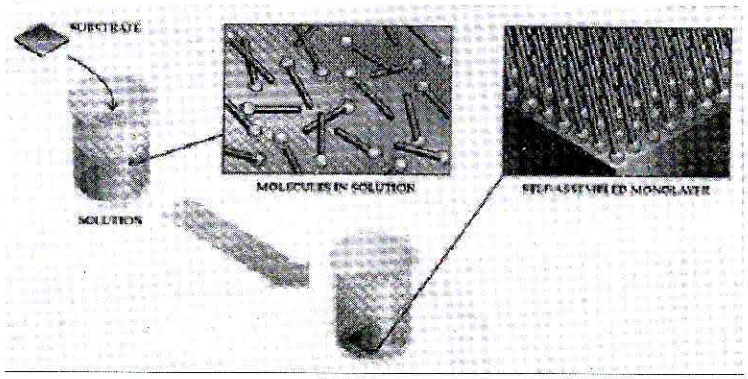

चित्र - 4 : स्वतः समायोजन प्रणाली की कार्य विधि

बंधनों के अतिरिक्त अंतर परमाण्विक-आण्विक अन्योन्य क्रियाओं का योगदान रहा है । स्वतः समायोजन प्रणाली से पदार्थ निर्माण में जिन बलों का योगदान होता है वे हैं : हाइड्रोजन बंधन, द्विध्रुवीय (dipolar) बल, वैन-डर-वाल बल, जल आकर्षण या जल प्रतिकर्षण बल (सुपर मॉल्यूक्यूलर बल), रासायनिक अवशोषण, तनाव, गुरुत्व बल । इन बंधन बलों के बारे में हमारी समझ में जो निरंतर सुधार हो रहा है, उससे एकदम अभिनव गुणों वाले तथा मानव जीवन के लिए उपयोगी पदार्थ, जिनमें नैनोपदार्थ एवं युक्तियां प्रमुख हैं, बनाने में हम सफल होते जा रहे हैं । जैविक जंतुओं में विशिष्ट आण्विक इकाइयों को सहज एवं चयनात्मक ढंग से पहचानने के गुण निसंदेह एक अद्‌भुत बात है । एक नर पतंगा/शलभ (मॉथ) में, मादा पतंगे द्वारा अतिसूक्ष्म मात्रा (आण्विक स्तर) में उत्सर्जित फेरोमोन को सरलता से पहचानने का गुण प्रकृति की अनमोल देन है । 21वीं

सदी इसी अनमोल गुण से प्रेरणा लेकर संसूचकों की एक नयी दुनिया बनाने की सोच रही है। यही नहीं, जैवकीय अनुकरण (बायोमिमेटिक्स) प्राकृतिक तौर पर चल रही क्षेपण प्रक्रिया (डिपोजिशन) जो और कुछ नहीं, स्व-समायोजन है, द्वारा अति प्रबल पदार्थ बनाने में सक्षम है। आम तौर पर मिलने वाले क्रस्टालीन शैल अकार्बनिक ऑक्साइड एवं कार्बनिक 'ग्लू' द्वारा बनते हैं। ये कृत्रिम रूप से पदार्थों को बनाने के लिए प्रेरणा देते हैं। हमारी अस्थियां जो अकार्बनिक हाइड्रॉक्सी एपाटाइट तथा कार्बनिक कोलोजन की मैट्रिक्स से बनती हैं, इसी क्रिया का सुंदर उदाहरण हैं। इन सबसे अलग आण्विक कंप्यूटर की कल्पना प्रकृति में जीवन जैसी प्रक्रिया एवं मस्तिष्क जैसे कंप्यूटर से स्वतः स्पष्ट हो जाती है। प्रकृति में मौजूद आण्विक स्तर की संरचनाएं कई स्थूल संरचनाओं के आधार बने हैं (चित्र-5)।

नैनो तकनीक व विज्ञान से क्या आशाएं हैं ?

इस तकनीक के विज्ञान, इंजीनियरी तथा चिकित्सा के क्षेत्र में कई संभावित अनुप्रयोग दिख रहे हैं। इनमें से कुछ प्रमुख क्षेत्र इस प्रकार हैं : उच्च घनत्व आंकड़ा संग्रहण युक्तियां, क्षेत्र-प्रभावित ट्रांजिस्टर, समतल (सपाट) स्क्रीन पदार्थ, दृश्य प्रक्षेपक, कंप्यूटर मॉनिटर, ऊर्जा संचयन, ईंधन सेल, सौर सेल, संसूचक, ट्रांस्ड्यूसर, फोटोनिक परिपथ, ट्यूनेबल लेसर, नैनोरोबोट, सुपर कंप्यूटर, आण्विक इलेक्ट्रॉनिकी, आण्विक मोटर, परमाणु माप के चिप, स्विच गियर, सौंदर्य प्रसाधन सामग्री, फेबरिक एवं टेक्सटाइल, रासायनिक उत्प्रेरक, लेपन, दूरसंचार एवं सूचना तकनीक, सुरक्षा, ऑटोमोबाईल, अंतरिक्ष अनुप्रयोग इत्यादि। इस तकनीक से पदार्थों के सतह गुणों को विभिन्न तरह से संशोधित कर सकते हैं जिसका सीधा लाभ रासायनिक उत्प्रेरण, आसंजन, कोरोजन (क्षरण), सिंटरिंग, विद्युत रसायनिकी से लेकर सूक्ष्म इलेक्ट्रॉनिकी, पर्यावरण मॉनिटरन तक के कई क्षेत्रों में संभव हैं। इन सबसे महत्वपूर्ण क्षेत्र है - जीवन विज्ञान। जीवन का विकास जैविकी में एक अत्यंत परिष्कृत बारीकी से किये गये कार्य का उदाहरण है, जिसमें स्थूल (मैक्रो) संरचनाएं तैयार कर उनमें कार्य क्षमता पैदा करना होता है। इसके लिए सृष्टि के क्रमिक विकास के दौरान आवश्यक परमाण्विक/आण्विक स्तर के बलों के प्रयोग से यह हो पाया है। परिणाम स्वरूप शरीर में स्वतः प्रतिकृतियों का बनना और विकृत कोशिकाओं की स्वतः मरम्मत जैसे काम 'बुद्धिमत्ता युक्त स्वसमायोजन' का ही अच्छा उदाहरण कहा जा सकता है। इसमें औषध एवं प्रोटीन पहुंचाने, मानव जीन एवं विभिन्न जीवों की कोशिकाओं में जैविक फेरबदल, ऊत्तक इंजीनियरी, शरीर प्रतिरक्षा परिरक्षण, जैवझिल्ली, एकल अणु विश्लेषण, अस्थि एवं हृदय रोग से लेकर खाद्य पदार्थ- सुरक्षा, कृषि, जैव युद्ध इत्यादि तक के अनेक अनुप्रयोग भविष्य की गोद में हैं।

इलेक्ट्रॉनिकी एवं यांत्रिकी :

आज का आम व्यक्ति भी इस बात से परिचित है कि इलेक्ट्रॉनिकी ने किस प्रकार हमारे जीवन को प्रभावित किया है। माइक्रोइलेक्ट्रॉनिकी के साथ-साथ प्रकाश इलेक्ट्रॉनिकी के द्वारा कंप्यूटर एवं सूचना तकनीक ने ब्रह्मांड में दूरियों को कम सा कर दिया है और काम करने की क्षमता में अत्यधिक बढ़ोत्तरी करके उत्पादन की क्षमता को बढ़ा दिया है। जब माइक्रोइलेक्ट्रोनिकी अपनी सीमा के पास पहुंच रही है तो नैनोइलेक्ट्रॉनिकी इन क्षेत्रों में एक नयी क्रांति की संभावना प्रदर्शित करने जा रही है। नैनो स्केल पर अणुओं-परमाणुओं, नैनोट्यूब, नैनोकणों, क्वांटम डॉट इत्यादि का उपयोग करके इलेक्ट्रॉनिकी के मौलिक घटक जैसे नैनोस्विच (चित्र-6), डायोड, ट्रांजिस्टर, प्रकाश ट्रांजिस्टर, क्षेत्र-प्रभाव ट्रांजिस्टर के बनाने में वैज्ञानिकों को कुछ सफलता मिल चुकी है। कार्बन नैनोट्यूब (चित्र-7) इस कार्य में अपनी उपयुक्तता की श्रेणी में काफी आगे हैं। कुछ लॉजिक सर्किट एवं नैनोस्विच भी प्रदर्शित किये जा चुके हैं। नैनो कंप्यूटरों के लिए इन क्षमताओं का महत्व काफी अधिक है। नैनो स्केल पर कार्यशील मशीनों (नैनोड्राइव) को बनाने की चर्चा वैज्ञानिक जगत में अधिक महत्वपूर्ण लगती है।

सूक्ष्म विद्युत यांत्रिकीय प्रणालियों (MEMS) को कंप्यूटर चिप निर्माण तकनीकों के उपयोग से बनाने पर जोर दिया जा रहा है। आई बी एम की बहुचर्चित मिलीपीड (Millipede) परियोजना में सूक्ष्म कैंटीलीवरों का प्रयोग सूचनाओं को पढ़ने, लिखने और मिटाने में किया जायेगा। कैंटीलीवर की नोक प्लास्टिक (पॉलीमर) पर डिजिटल-1 दर्शाने के लिए एक खांच (dent) बनाती है जबकि खांच की अनुपलब्धता डिजिटल-0 होता है। इस प्रकार इस परियोजना के अंतर्गत पहला स्मृति कार्ड एक डाक स्टैंप के माप का बनेगा, जो एक साथ में ले जाने लायक (पोर्टेबल) इलेक्ट्रॉनिक युक्ति में काम आयेगा। उच्च-घनत्व इलेक्ट्रॉनिकी स्मृति संबंधित अन्य परियोजनाएं जापान, नीदरलैंड, अमरीका में कई संस्थानों में भी चल रही हैं।

नैनोट्यूब के उपयोग से क्रमवीक्षण प्रोब सूक्ष्मदर्शी के लिए आण्विक चिमटियाँ बनाकर अणुओं-परमाणुओं को आवश्यकतानुसार स्थानांतरित करना नैनो निर्माण के लिए जरूरी विकास है। कार्बन नैनोट्यूब के द्वारा तैयार विशेष स्व-आधारित पारदर्शी चादर (शीट) जो स्टील से भी मजबूत है, के बनाने की सफलता की जानकारी 'साइंस' नामक पत्रिका में अमरीका तथा ऑस्ट्रेलियाई वैज्ञानिकों ने हाल ही में दी है। इनका उपयोग कारों के लिए पारदर्शी एन्टीना तथा विद्युतीय रूप से गर्म करने लायक खिड़कियों में किया जा सकेगा।

इसी प्रकार एक आण्विक 'कार' का प्रदर्शन भी हो चुका है। इसमें परमाण्विक बल सूक्ष्मदर्शी की नोक की सहायता से इसे सोने (गोल्ड) की सतह पर चलाया गया। इस कार का ढांचा फिनीलीन इथीलीन बहुलक (ऑलिगो पॉलीमर) से बनाया गया और उसके ऐक्सल को फुल्लरीन के चार पहियों (व्हील) से

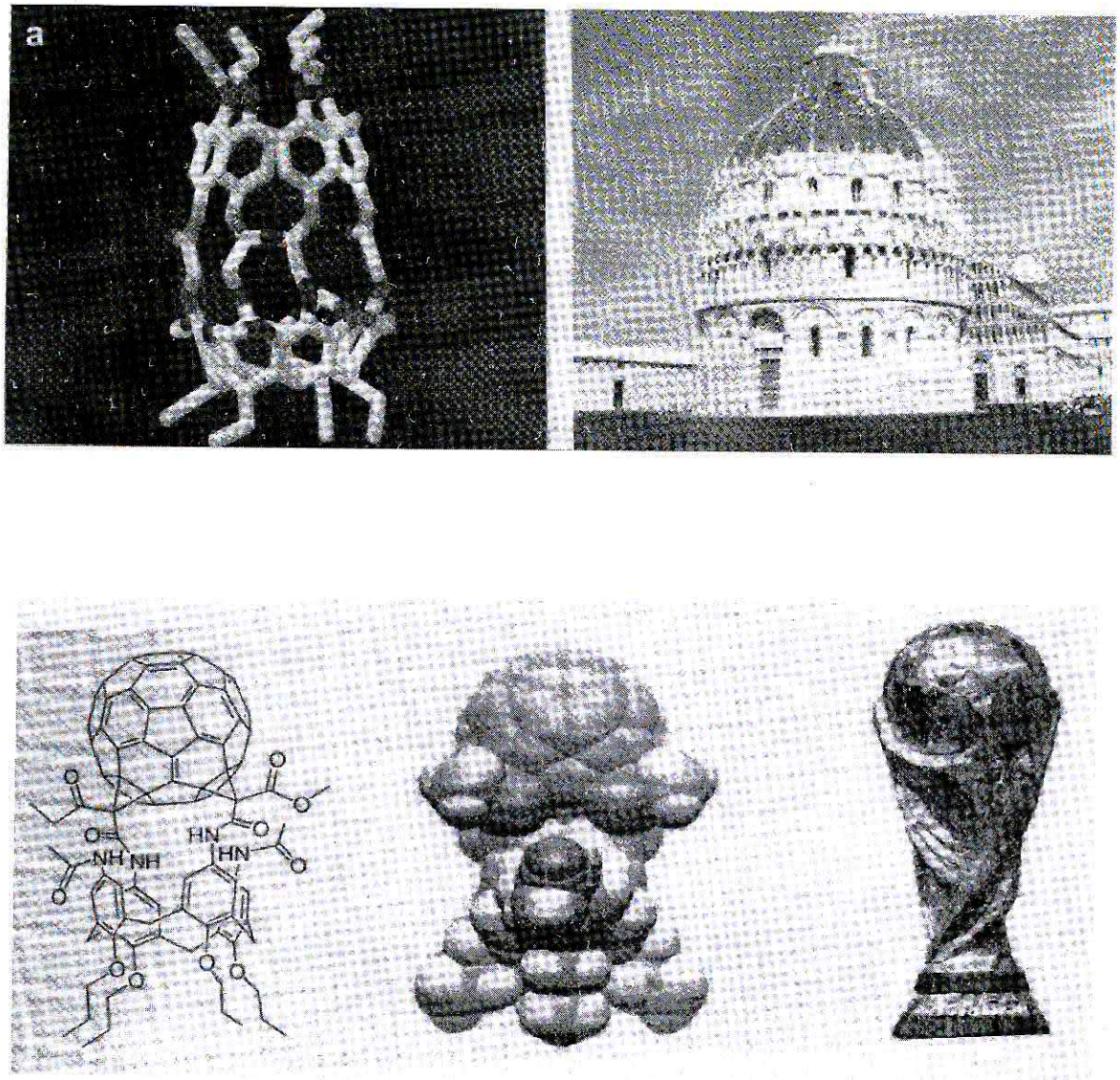

चित्र - 5 : प्रकृति में मौजूद आण्विक स्तर की संरचनाएं कई स्थूल संरचनाओं के आधार हैं । यह प्रकृति की स्वत: समायोजन कार्यविधि तथा नैनो संसार की घनिष्ठता को प्रदर्शित करता है ।
(अ) केलिक्सारीन से सह-बंधित फुल्लरीन का रासायनिक समायोजन (सुपरा मॉलिक्यूलर स्वरूप), उसका कंप्यूटर मॉडलिंग द्वारा तैयार प्रतिरूप एवं फुटबाल वर्ल्ड कप में समरूपता का प्रदर्शन
ब) रिसोरकारी - केलिक्सारीन कारसेरैंड की आण्विक संरचना (आर्किटेक्चर) एवं उसके समरूप इटलीका पिसा बैटिस्टीरो का चित्र ।

परमाण्विक सह-बंधनों से जोड़ा गया है । यही नहीं, आम वातावरण में स्थायी तौर पर रहने लायक अकार्बनिक पदार्थों के नैनो कणों से सौर सेल तैयार किये गये हैं । इसे कैडमियम टैल्यूराइड के नैनो कणों का उपयोग करके विद्युतीय रूप से चालक कांच पर इलेक्ट्रॉन समृद्ध कैडमियम टैल्यूराइड की फिल्म से बनाया गया है ।

जीवविज्ञान एवं चिकित्सा :

जीवों को जीवन प्रदान करने का श्रेय कोशिकाओं को जाता है जिन्हें हम जीवन की इकाई के रूप में जानते हैं । जीवन की जैव क्रियाओं का संचालन जैव शक्ति के द्वारा होता है । इस तकनीक का सबसे लोकप्रिय लाभ जो अभी दिख रहा है, वह है अति सूक्ष्म मशीनों (नैनोरोबोट) का निर्माण, जिन्हें शरीर में

प्रवेश कराकर विकृत कोशिकाओं का पता चला कर उनका इलाज करना। एक अनुमान के अनुसार यह सफलता के काफी करीब दिखती हैं, क्योंकि कई दवाओं को सीधे प्रभावित भाग में पहुंचाने की कार्यविधि से संबंधित युक्तियां परीक्षण के लिए तैयारी के स्तर पर पहुंच चुकी हैं। परमाणु स्तर पर प्रोब बनाकर कोशिका के अंदर ही जैवअणु की प्रक्रिया को समझना, नैनोट्यूबों पर जैव अणुओं की परत लगाकर उनकी सहायता से अणु विशेषों में फेरबदल करना, जैव नैनो तकनीकी की बड़ी सफलता होगी।

जीवन का आधार डी. एन. ए. एक तरह की सूक्ष्म मशीनें (नैनोरोबोट) हैं, जो न केवल स्वयं की प्रतियां बनाती हैं बल्कि जीव बनाने के निर्देश भी रखती हैं। प्रोटीन जो अपने आप में एक नैनोयंत्र है, इन जैव मशीनों में हार्डवेयर के रूप में कार्य करते हैं। प्रोटीन भी अणु-परमाणुओं में फेरबदल कर सकते हैं।

कैलीफोर्निया विश्वविद्यालय के डॉ. एलेन आर. निसेनसन एवं उनके साथियों ने नैनोतकनीक के उपयोग से कृत्रिम गुर्दे के निर्माण से संबंधित संकल्पनात्मक कार्य पूरा करते हुए हाल में इस बात की जानकारी 'हेमोडियालिसिस इंटरनेशनल' शोधग्रंथ के माध्यम से दी है कि - 'वास्तविक गुर्दे' में कार्यरत जैवझिल्ली के समान की संरचना तैयार करके अगले पांच वर्षों में वे शरीर में प्रतिस्थापित करने लायक गुर्दा तैयार कर पायेंगे। यह निःसंदेह मानव जाति के लिए एक वरदान स्वरूप कार्य सिद्ध होगा।

नैनो तकनीक से चिकित्सा के क्षेत्र में रोग निदान हेतु प्रयुक्त सेंसरों में आशातीत सुधार होने की संभावना सबसे प्रबल है। इससे, एक-दो बूंद खून से रोग का पूर्णतः पता चल सकेगा जिससे शल्य चिकित्सा को आण्विक स्तर पर विकसित करने में योगदान मिलेगा। सबसे बड़ी चुनौती होगी शरीर की प्रतिरक्षा प्रणाली के नैनोयंत्रों/पुर्जों का विकास, जिनसे रोगों के हमलावरों को निष्क्रिय किया जा सके। कोशिकाओं से अतिसूक्ष्म इन स्मार्ट नैनोपुर्जों को शरीर के अंदर प्रवेश करा कर छोड़ा जा सकता है, चूंकि उनमें परजीवियों को मारने, अनावश्यक वसा को हटाने, विकृत ऊतकों, कोशिकाओं की सूचना देने इत्यादि निर्देश समाहित होंगे तो यह शरीर को रोगमुक्त करने में अहम भूमिका निभायेंगे।

इस प्रकार ये कैंसर प्रभावित कोशिकाओं को स्वतः पहचान कर नष्ट कर सकने में सक्षम होंगे। किसी चोट या अपंगता की स्थिति में ये सक्रिय कोशिकाओं को प्रेरित कर उन्हें केवल चोट/घाव की जगह पहुंचने का संदेश देकर उसे ठीक करने की प्रक्रिया कर सकते हैं। हड्डियों की मरम्मत इनके द्वारा कुछ ही घंटों में संभव हो पायेगी। हृदय रोग में कोलेस्ट्रॉल को निकाल कर रक्त प्रवाह की रुकावट को हटाकर 'हार्टअटैक' से बचा सकते हैं। आवश्यक होने पर प्रभावित मांसपेशियों की जगह पर नयी मांसपेशियों को प्रतिस्थापित भी कर सकते हैं। यह शरीर में चल रही रासायनिक क्रियाओं को भी नियंत्रित कर मधुमेह, मोटापे, आस्टियोपोरोसिस इत्यादि रोगों में राहत दे सकते हैं। स्वचालित नैनोचिकित्सा में प्रयुक्त ये नैनो पुर्जे/रोबोट किसी सुपर कंप्यूटर से कम नहीं होंगे। ये यथास्थान निर्देश के साथ अपना कार्य पूरा करेंगे।

उद्योग एवं पर्यावरण :

औद्योगिक जगत में खपत की सामग्रियों को गुणवत्ता रखते हुए तैयार करना काफी कठिन कार्य होता है, क्योंकि कच्चा माल सदैव एक सा नहीं मिलता है। इसके साथ-साथ ये प्रक्रियाएं पर्यावरण स्नेही भी नहीं रह पातीं। औद्योगिक क्रांति ने जहां एक ओर हमें कई साधन और वस्तुएं दी हैं, वहीं दूसरी ओर पर्यावरण को प्रदूषित करने में कोई कसर नहीं छोड़ी है। जब भविष्य में नैनो तकनीक आर्थिक दृष्टि से व्यवहार्य बनने की स्थिति में आ जायेगी तो अणुओं-परमाणुओं को जोड़-जोड़ कर दक्ष प्रक्रियाओं द्वारा पदार्थ निर्मित किये जायेंगे। इससे एक ओर पदार्थ की गुणवत्ता बनी रहेगी तो दूसरी ओर पर्यावरण पर कुप्रभाव भी नहीं पड़ेगा। नैनो कंप्यूटरों के प्रयोग से उत्पादन में काफी वृद्धि भी होगी तथा वस्तुएं सस्ती बनेंगी। नैनोरोबोट द्वारा उद्योग प्रचालित किये जा सकेंगे, जिनमें विषैले पदार्थों को पर्यावरण में बिखरने से पहले उनको पर्यावरण स्नेही बनाने के निर्देश भी समाहित होंगे।

अभी तक जो संकेत मिल रहे हैं, उनसे यही अनुमान लगाया जा सकता है कि नैनो तकनीक भविष्य (उदाहरणार्थ 25-30 वर्षों बाद) के लिए तैयार हो रही तकनीक ही है। हालांकि पिछले 15 वर्षों में एक दर्जन से अधिक नोबेल पुरस्कार इससे संबंधित विषयों पर मिल चुके हैं। स्कैनिंग प्रोब माइक्रोस्कोप से फुल्लरीन की खोज तक के ये पुरस्कार इस क्षेत्र की महत्ता दर्शाते हैं। हालांकि यह अभी प्रारंभिक अवस्था में है, इसलिए आनेवाली पीढ़ियों के वैज्ञानिकों के लिए प्रेरणास्रोत बने रहेंगे। जैसे पहले कहा जा चुका है कि प्रकृति ने भी एक सरल सा जीव बनाने में लगभग 40-50 करोड़ वर्ष लगाये हैं तो हमें आने वाले निकट भविष्य में कोई चमत्कार की बहुत अधिक उम्मीद नहीं करनी चाहिए। इसके विपरीत व्यापारिक दृष्टि से यह एक अन्य तकनीक है जिसकी महत्ता इस बात पर निर्भर करेगी कि इससे कितना आर्थिक लाभ मिलेगा। एक अनुमान के आधार पर इस समय विश्व में लगभग 600 से अधिक कंपनियां इस क्षेत्र में सक्रिय हैं। पिछले वर्ष सरकारी तथा गैर सरकारी क्षेत्रों द्वारा इस विषय पर शोध के लिए लगभग चालीस करोड़ डॉलर लगाये जा चुके हैं और भविष्य में और लगाने के लिए तत्पर हैं। भारत में, हाल में आने वाले 5 वर्षों के लिए नैनो पदार्थों तथा माइक्रो-इलेक्ट्रो-मैकेनिकल सिस्टम्स (सूक्ष्म-विद्युत यांत्रिकी

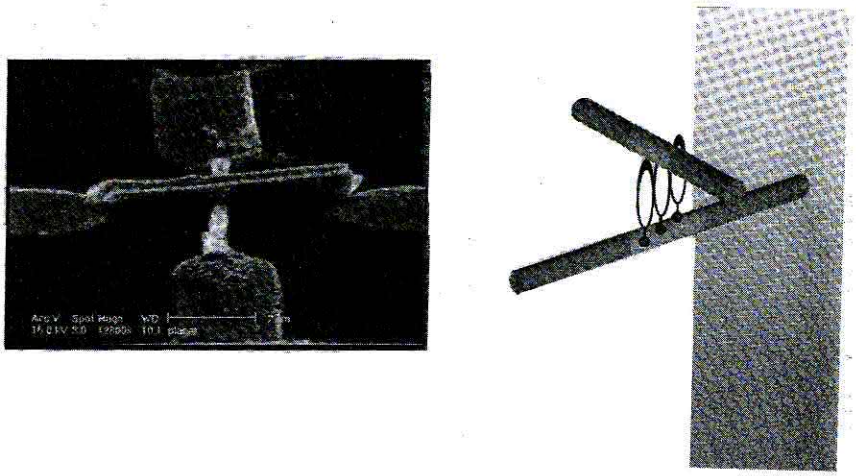

चित्र - 6 : नैनो तारों से बना एक नैनो स्विच

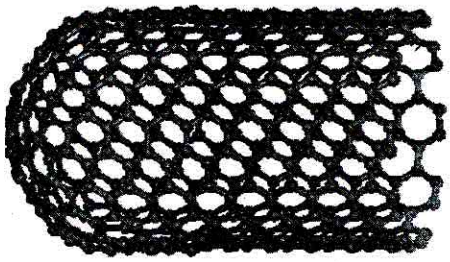

चित्र - 7 : एक अणु से बनी कार्बन नैनो ट्यूब की संरचना

प्रणालियों) के लिए 150 लाख डॉलर की समतुल्य राशि का एक राष्ट्रीय कार्यक्रम प्रारंभ किया जिसमें 10 अनुसंधान संस्थानों को शामिल किया गया था तथा विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग (डीएसटी) ने राष्ट्रीय नैनो तकनीक कार्यक्रम (नेशनल नैनो टेक्नोलॉजी प्रोग्राम) के अंतर्गत 100 लाख डॉलर की राशि आने वाले तीन वर्षों के लिए ख़ास तौर पर रखी है। राजनैतिक स्तर पर एक अज्ञात भय है कि कहीं हम पीछे न छूट जायें, इसी होड़ में विभिन्न राष्ट्र इस क्षेत्र में निवेश कर रहे हैं। इस तकनीक से इंटरनेट से भी बढ़कर आर्थिक, प्रतिरक्षा एवं सांस्कृतिक प्रभावों की आशा है। बहरहाल, इन सबसे हटकर जो प्रत्यक्ष लाभ वैज्ञानिक जगत को मिला है, वह है कि भौतिक-रसायन एवं जीव विज्ञानी सब एक साथ मिलकर काम करने लगे हैं। यह प्रकृति सम्मत एक उज्ज्वल भविष्य के लिए अच्छा संकेत है।

❐❐❐

सूर्य : ऊर्जा का स्वच्छ अपारंपरिक स्त्रोत

इंदिरा कड़ाकोटी* एवं कविता पांडेय**

(*शोध छात्रा, **आचार्य)

भौतिकी विभाग, कुमाऊं विश्वविद्यालय, नैनीताल

ऊर्जा मनुष्य की मूलभूत आवश्यकता है। संसार के विभिन्न देश अपनी ऊर्जा आवश्यकता की आपूर्ति विभिन्न स्रोतों से करते हैं, जिन्हें हम व्यावसायिक तथा अव्यवसायिक दो मुख्य भागों में वर्गीकृत कर सकते हैं। औद्योगिक रूप से विकसित देश कोयला, तेल व गैस, जल विद्युत व परमाणु ऊर्जा जैसे व्यावसायिक ईंधनों का उपयोग अधिक करते हैं। भारत जैसे विकासशील देशों को अपनी ऊर्जा आवश्यकता के लिए व्यावसायिक स्रोतों के साथ-साथ लकड़ी, कृषि व पशु उच्छिष्ट जैसे अव्यावसायिक स्रोतों पर भी समान रूप से निर्भर रहना पड़ता है। परंतु इनके अलावा और पारंपरिक स्रोतों की महत्ता को कम नहीं आंका जा सकता है। सूर्य ऊर्जा एक अत्यंत विशाल एवं प्रदूषण रहित स्रोत है। इस कारण से ऊर्जा का जन जीवन के कामों में वैज्ञानिक तौर पर उपयोग वांछित है। प्रस्तुत लेख इस स्वच्छ अपारंपरिक ऊर्जा स्रोत के कुछ पहलुओं पर प्रकाश डालता है।

सन् 1700 में वाष्प इंजन के आविष्कार के साथ ही विश्व में एक औद्योगिक क्रांति आयी, और कोयला ईंधन के रूप में बहुलता से प्रयुक्त होने लगा। विकास के साथ कोयले का उत्पादन एवं खपत दोनों ही बढ़े। अनुमानतः कोयले का उत्पादन 2030 तक अधिकतम होगा एवं उसके बाद के बीस वर्षों में वर्तमान की खपत बढ़ोत्तरी के आधार पर संपूर्ण भंडार पूर्णतया रिक्त हो जायेगा। इसी प्रकार कच्चे तेल का उत्पादन जो 1970 में 2.5 लाख मिलियन बैरल था, वर्तमान में अधिकतम है, तथा आगामी बीस वर्षों में यह भी समाप्त हो जायेगा। तेल व प्राकृतिक गैस की उपलब्धता में कमी होने पर कोयले की खपत पर दबाव और बढ़ेगा। संभावना है कि आने वाले बीस-पच्चीस वर्षों में पारंपरिक ऊर्जा स्रोत इतने क्षीण हो जायेंगे कि सामान्य जन के लिए दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति करना भी दुष्कर हो जायेगा। इन्हीं समस्याओं के समाधान के लिए वैज्ञानिक ऊर्जा के गैर पारंपारिक स्रोतों के नये आयामों को विकसित करने में संलग्न हैं, हमारे पास सूर्य ऊर्जा का एक अत्यंत विशाल एवं प्रदूषण रहित स्रोत है, जिसके मानव जीवन काल में क्षीण होने की संभावना भी नहीं है। यह 5762 केल्विन ताप वाला एक कृष्ण पिंड है जो अपने द्रव्यमान को संलयन (फ्यूजन) अभिक्रिया द्वारा विकिरण ऊर्जा में परिवर्तित करता है तथा इस प्रक्रिया में प्रति सेकंड 380 मिलियन ट्राईलियन की ऊर्जा मुक्त होती है। परंतु पृथ्वी तक केवल 173 ट्राईलियन किलोवाट ऊर्जा ही पहुंचती हे। फिर भी यह ऊर्जा समस्त मनुष्य जाति की ऊर्जा आवश्यकताओं से कई हजार गुना अधिक है। अतः इस ऊर्जा का अधिक से अधिक उपयोग जन-हित के लिए किया या सकता है। सूर्य से प्राप्त विकिरण को विभिन्न तकनीकों द्वारा उपयोगी ऊर्जा में बदला जा सकता है। बादल रहित दिन में पृथ्वी पर पहुंचने वाला 90% सौर विकिरण प्रत्यक्ष तथा शेष 'डिफ्यूज' होता है। जबकि बादल वाले दिनों में संपूर्ण प्राप्त सौर-विकिरण डिफ्यूज हो सकता है।

पृथ्वी के परिमंडल के बाहर सौर विकिरण का एक निश्चित मान होता है जो "सौर नियतांक" द्वारा निर्दिष्ट किया जाता है। एक वर्ग मीटर पर पड़ने वाली 1353 वॉट की ऊर्जा को "सौर नियतांक" कहते हैं। पृथ्वी के वातावरण से गुजरते हुए सौर विकिरण की मात्रा वातावरण में उपस्थित कार्बन-डाई-ऑक्साइड व ओजोन गैस, जल-वाष्प तथा धूल के कणों के कारण कम हो जाती है। भारत में गर्मियों में किसी भी क्षैतिज-तल पर 5 से 7.4 किलोवॉट/मी^{2} तथा जाड़ों में 4 से 6.3 किलोवॉट/मी^{2} विकिरण प्राप्त होता है। ग्रीष्म ऋतु में अधिक सौर-विकिरण प्राप्त होता है तथा इसकी तीव्रता भी ग्रीष्म ऋतु में अधिकतम से शीत ऋतु में न्यूनतम तक बदलती है (चित्र-1)।

सूर्य से प्राप्त ऊर्जा का उपयोग प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष दोनों तरह से किया जाता है। प्रत्यक्ष प्रयोग के अंतर्गत ऊष्मीय ऊर्जा तथा फोटो-वोल्टीय रूपांतरण तथा अप्रत्यक्ष प्रयोग के अंतर्गत जल-शक्ति, वायु तथा बायोमास इत्यादि आते हैं।

संग्राहक का प्रयोग करके सौर-ऊर्जा का संग्रह किया जा सकता है। इसमें फ्लैट-प्लेट संग्राहक प्रमुख हैं। फ्लैट-प्लेट संग्राहक में एक धातु की प्लेट होती है जिसकी सूर्य के सामने वाली सतह पर कालिख पुती होती है, ताकि चालन द्वारा ऊष्मा हानि न्यूनतम हो तथा विकिरण व संवहन द्वारा ऊष्मा हानि रोकने के लिए इसके समांतर कांच व प्लास्टिक के आवरण होते हैं। सौर-विकिरण को कांच की प्लेट अंदर तो आने देती है परंतु बाहर जाने से रोकती है। इसमें अवशोषक तथा उत्सर्जक सतहों का क्षेत्रफल बराबर रखा जाता है। ऊष्माक्षति न्यूनतम होने से संग्राहक की क्षमता बढ़ जाती है। फ्लैट-प्लेट संग्राहक के सिद्धांत पर आधारित अनेक सौर ऊष्मीय युक्तियों का निर्माण किया जाता है, जिनमें सौर-जल तापक, सौर-कुकर, सौर भभका

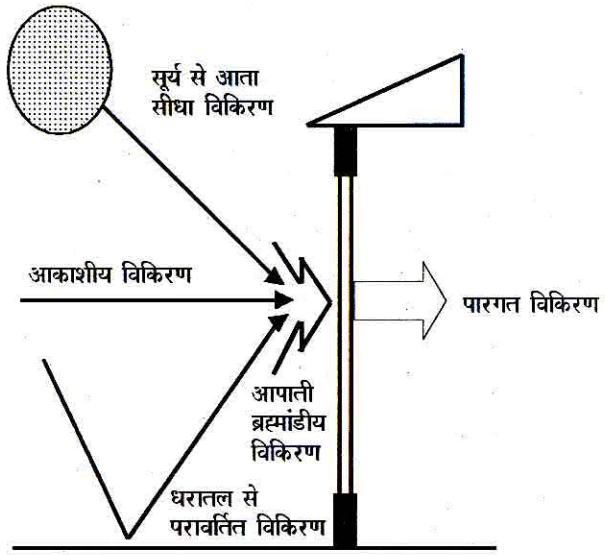

चित्र 1 :

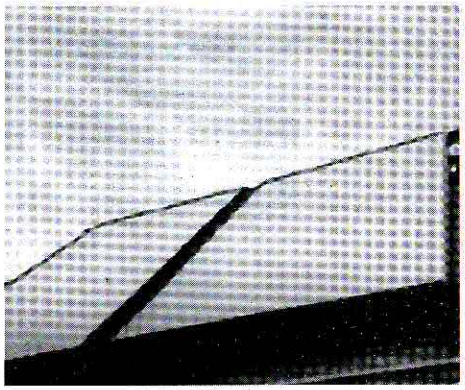

चित्र 2 :

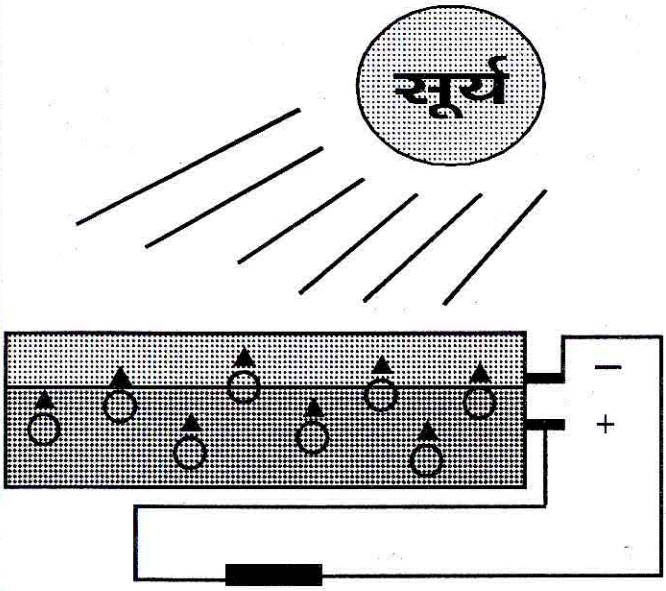

चित्र 3 :

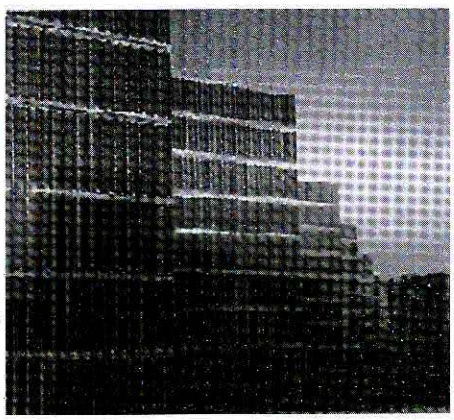

चित्र 4 :

तथा सौर ड्रायर प्रमुख हैं ।

परावर्तक दर्पण के प्रयोग से संग्राहक का तापमान बढ़ाया जा सकता है । डबल ग्लेजिंग तथा दर्पण का प्रयोग करके तापमान 100-140^{0}C तक बढ़ाया जा सकता है । यदि ऊर्जा का संकेंद्रण कम क्षेत्रफल में किया जाये तो संग्राहक के तापमान में और अधिक वृद्धि हो सकती है, जो कि संकेंद्रित संग्राहक के द्वारा संभव है । निकिल ब्लैक तथा धातु ऑक्साइड जैसे पदार्थ का लेप चढ़ाने से संग्राहक की अवशोषक क्षमता काफी बढ़ (>0.9) जाती है ।

सौर-जल तापक का उपयोग शीत-ऋतु में नहाने तथा अन्य घरेलू कार्यों हेतु जल को गर्म करने में किया जाता है । इसके अतिरिक्त ये होटलों तथा उद्योग आदि में भी प्रयुक्त होते हैं (चित्र-2) । इसमें नेचुरल-सरक्युलेशन तथा संग्राहक-कम-स्टोरेज जल-तापक प्रमुख हैं । नेचुरल-सरक्युलेशन की अपेक्षा कलेक्टर-कम स्टोरेज-जल तापक की कीमत लगभग 40% कम होने के कारण यह आर्थिक रूप से अधिक उपयोगी है । सेंट्रल ऐरिड जोन रिसर्च इन्स्टीट्यूट, जोधपुर, एन पी एल, दिल्ली, अरविन्दो आश्रम, पांडीचेरी तथा ब्रह्मकुमारी आश्रम, माउंट आबू में विभिन्न प्रकार के सौर-कुकरों का निर्माण किया जा चुका है । एम एन ई एस की रिपोर्ट के अनुसार दिसंबर 2001

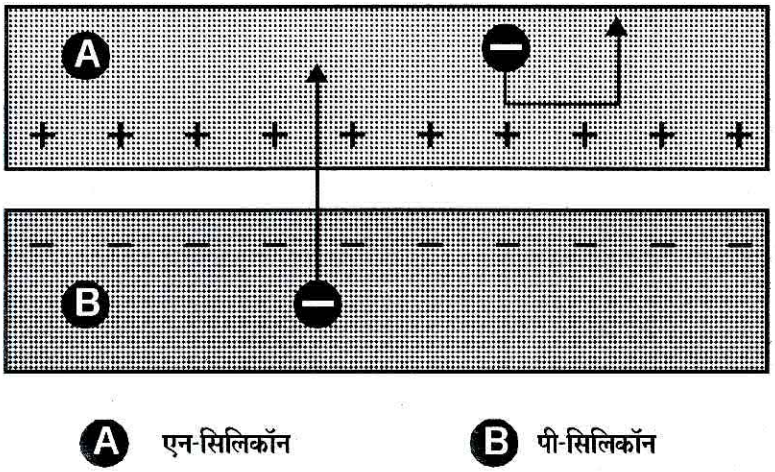

चित्र 5 : विद्युत क्षेत्र का प्रकाश-वोल्टीय सेल पर प्रभाव

तक 5,22,000 सौर-बॉक्स कुकर बेचे जा चुके हैं । 10 व्यक्तियों के परिवार द्वारा एक सोलर कुकर के निरंतर उपयोग से प्रत्येक वर्ष गैस के 16 सिलेन्डरों की बचत की जा सकती है । ग्रामीण क्षेत्रों में जहां पर लोग भोजन बनाने के लिए मिट्टी का तेल, लकड़ी तथा गोबर आदि का इस्तेमाल करते हैं, सौर कुकर अत्यंत उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं ।

आसवन विधि द्वारा खारे पानी को शुद्ध करके पीने योग्य बनाने हेतु सौर-भभका प्रयुक्त होता है । यह उन स्थानों के लिए विशेष उपयोगी है जहां स्वच्छ जल का अभाव होता है । सी एस एम सी आर आई, भावनगर (गुजरात) ने बड़ी संख्या में सौर-भभकों का निर्माण किया है । इसके अलावा राजस्थान के भेलारी क्षेत्र में भी सौर-भभकों का निर्माण किया जा रहा है । इसके द्वारा प्रत्येक दिन 3 से 5 लीटर जल आसवित किया जा सकता है । कृषि उत्पादों को सुखाने हेतु सौर ड्रायर का उपयोग किया जाता है । इस प्रक्रिया द्वारा नमी हटाकर उत्पादों को सुरक्षित रखा जा सकता है । 10 किलो धारिता वाला सौर-ड्रायर एक साल में लगभग 290 किलोवॉट बिजली की बचत करता है तथा इसके द्वारा काफी कम समय में कृषि उत्पादों को सुखाया जाता है ।

सौर-सेल : सौर-सेल सूर्य के प्रकाश को विद्युत में परिवर्तित करते हैं, तथा इनका उपयोग परिकलक एवं घड़ियों में बहुतायत से किया जाता है । सौर-सेल कंप्यूटर चिपों में प्रयोग किये जाने वाले अर्धचालक पदार्थों से बने होते हैं । जब सूर्य का प्रकाश इन अर्धचालकों द्वारा अवशोषित किया जाता है, तो परमाणुओं के ढीले इलेक्ट्रॉन अवमुक्त होकर विद्युत धारा प्रवाहित करते हैं । इस प्रक्रिया को प्रकाश विद्युत प्रभाव कहते हैं । लगभग चालीस सौर-सेलों के एक मॉड्यूल तथा ऐसे दस माड्यूलों को, कई मीटर लंबाई वाले पॉली विनायल (पी.वी.) श्रेणी पर इस तरह स्थापित किया जाता है, कि उसका मुख दक्षिण की ओर रहे और पूरे दिन भर उस पर सूर्य का प्रकाश अधिकाधिक पड़ता रहे । ऐसी लगभग दस से बीस श्रेणियां एक घर को और सौ श्रेणियाँ एक सामान्य औद्योगिक इकाई को विद्युत प्रदान कर सकती हैं । इन श्रेणियों को फ्लैट-प्लेट श्रेणियां कहते हैं (चित्र -3,4) ।

इसके विपरीत कुछ सौर-सेलों को सूर्य ऊर्जा लेंस के द्वारा केंद्रित करके भी कार्य में लाया जा सकता है ।

सेलिनियम तथा क्यूप्रस ऑक्साइड का प्रयोग प्रकाश-वोल्टीय सेलों में किया जाता है । पतली फिल्म वाले सौर-सेलों के निर्माण में अपेक्षाकृत कम पदार्थ की आवश्यकता होती है । इसके लिए एमॉरफस सिलिकन, CdS, CdTe, $CuInGaSc_2$, InP तथा GaAs आदि पदार्थ प्रयुक्त होते हैं । पदार्थ का चुनाव विभिन्न कारकों पर निर्भर करता है, जिनमें पदार्थ का बैंड-गैप, अवशोषण-गुणांक, संवहन एवं प्रसार लंबाई तथा जंक्शन आदि प्रमुख हैं ।

किसी भी सौर-सेल से अधिक मात्रा में प्रकाश-धारा उत्पन्न करने के लिए अर्धचालक का बैंड गैप कम होना चाहिए परंतु अधिक विभव प्राप्ति के लिए बैंड-गैप का परिमाण अधिक होना चाहिए । दोनों कारकों को जब सूर्य वर्णक्रम से समायोजित किया जाता है, तो उपयोग किये जाने वाले पदार्थ के लिए बैंड-गैप का मान 1.44 इलेक्ट्रॉन-वोल्ट प्राप्त होता है । यह बैंड गैप CdTe के लिए है । CdTe क्रिस्टल का 0.4माइक्रॉन मोटाई वाला केलास 90% सूर्य का प्रकाश अवशोषित करता है जबकि Si के अर्धचालकों द्वारा इतनी ऊर्जा अवशोषित करने के लिए 100 माइक्रॉन का होना चाहिए । अर्धचालक में उत्पन्न वाहक अच्छे संवाहक होने चाहिए तथा काफी दूरी तक विपरीत आवेश वाहकों द्वारा अवशोषित नहीं होने चाहिए । अर्धचालक क्रिस्टल

(कृपया शेष भाग पृष्ठ 31 पर देखें)

टिप्पणियां

1. बड़ी इलायची

अल्पमात्रं, महावेगं बहुदोषहरं सुखम ।
लघुपाकं सुखा स्वादं प्रीणनं व्याधिनाशमं ।।
अविकारी च व्यापतो नातिग्लानिकरंच यत् ।
गन्धवर्ण रसोपेवमं विद्यान्मात्रावदोषधम् ।।

(जिसकी मात्रा कम हो, जिसका वेग तीव्र हो, जो बहुत व्याधियों को नष्ट करे, जो सुख पूर्वक ग्रहण की जा सके, जिसका पाचन व विपाक लघु हो, जो मन को तृप्त करने वाली हो, जो रोग को नष्ट करने वाली हो, जो कभी विकार पैदा न करे, यदि कभी औषध की व्याप्ति हो जाय तो भी ग्लानिकर न हो, जिसका गंध वर्ण रस उत्तम हो, जो मात्रा पूर्वक दी गयी हो, ऐसी आदर्श औषधीय गुणों वाली बड़ी इलायची भी आदर्श औषधियों के रुप में आयुर्वेद में उत्तम मानी जाती है ।)

सामान्यत: 'मसालों की रानी' कही जाने वाली बड़ी इलायची का वानस्पतिक नाम एमोमम सुबुलेटम (Amomum subulatum Roxb.), संस्कृत नाम वृहदलता और अंग्रेजी में लार्ज कार्डेनम है । यह जिन्जीबिरेसी कुल का सदस्य है । भारत में इसकी प्रमुख प्रजातियां, बड़लंग, रामसे, सावने व गोलसे हैं । बड़ी इलायची का मसालों के रुप में बड़ा महत्व है । विश्व में भारत बड़ी इलायची का प्रमुख उत्पादक व निर्यातक देश है । विश्व के कुल उत्पादन का 20 प्रतिशत भारत अकेले उत्पादन करता है । भारत के अलावा तंजानिया, नेपाल, श्रीलंका, वियतनाम, और कंबोडिया इसके मुख्य उत्पादक देश हैं । भारत में नगदी फसल के रुप में यह कर्नाटक, केरल, तमिलनाडु, आसाम, सिक्किम तथा हिमालय के क्षेत्रों में उगायी जाती है । इसमें सिनिओल नामक प्रमुख रासायनिक अवयव पाया जाता है । इसकी फसल मुख्यतया छायादार स्थानों विशेषकर उतीस, (Alnus nepalensis), आम (Mangifera indica), अखरोट (Juglaans), संतरा (Citrus spp), बांज (Quercus spp) इत्यादि की छाया में एवं जहां पानी की प्रचुर मात्रा हो, अच्छी तरह से उगायी जा सकती है ।

इसका प्रयोग मसालों के अतिरिक्त औषधियों में भी किया जाता है । मुख्य रोगों यथा दंत रोगों में क्वाथ एवं अपच, अजीर्ण, वात, कफ, पित्त रक्त रोगों एवं मूत्र रोगों के अलावा सिरसूल में इसका लेप किया जाता है । इसकी खेती के लिए दोमट मिट्टी एवं लाल मिट्टी, जिसमें जीवांश एवं कार्बनिक पदार्थों की मात्रा अधिक हो, सर्वोत्तम मानी जाती है । इसकी उचित पैदावार हेतु भूमि की संरचना अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान रखती है । भूमि में जल निकास की उचित व्यवस्था होना अत्यंत आवश्यक है । जल भराव की दशा में पौधे मर जाते हैं ।

इसके उत्पादन के लिए भूमि की 2-3 इंच गहरी जुताई करनी चाहिए । गढ़ों में 2:1 अनुपात में मिट्टी एवं गोबर की खाद या कंपोस्ट अच्छी प्रकार मिलाकर भर देना चाहिए । गढ़ों के बीच की दूरी 1 से 1.5 मी. होनी चाहिए । बड़ी इलायची का प्रवर्धन दो प्रकार से किया जाता है :

1) सकर्स या पौध द्वारा,
2) बीज द्वारा ।

सकर्स विधि द्वारा एक से डेढ़ वर्ष पुराने स्वस्थ एवं रोग रहित पौधे ही प्रयोग में लाने चाहिए । पौध रोपण मई से जून के महीने में ही करना चाहिए । पौध रोपण के बाद गढ़ों की मल्चिंग सूखी पत्तियों से कर देनी चाहिए ।

बीजों द्वारा पौध तैयार करने के लिए 1x6 मी. की 15 सेंमी. ऊंची क्यारी बना लेते हैं । इन क्यारियों में भली प्रकार खाद एवं कीटनाशक मिला लेने चाहिए । प्रत्येक क्यारी में 10 ग्राम बीज प्रति वर्ग मीटर की दर से बो दिये जाते हैं । तत्पश्चात क्यारी को कंपोस्ट खाद या गोबर की खाद की पतली तह से ढक दिया जाता है । बीज बुवाई के लगभग 20-25 दिनों तक क्यारियों को नम रखना अत्यंत आवश्यक है । ऐसा करने से बीजों में अंकुरण अच्छा होता है । उसके बाद ऊपर से सूखी घास व पत्तियों की मल्चिंग देनी आवश्यक है । इसमें 25 दिनों में अंकुरण शुरु हो जाता है । नर्सरी में एक प्रतिशत बोर्डो मिश्रण का स्प्रे समय-समय पर दिया जाना चाहिए ताकि पौधों को बीमारियों से बचाया जा सके ।

एक से डेढ़ वर्ष पुरानी पौध या सकर्स को जून-जुलाई महिने में पहले से तैयार गढ़ों में 1-2 सकर्स प्रति गढ़े में लगा दिया जाता है । पौध के प्रति सकर्स को गढ़ों में लगभग 12-18 सेमी. की गहराई में अच्छी प्रकार दबा देना चाहिए । पौध प्रत्यारोपण के समय ही 10 किग्रा. फ्यूराडान प्रति हैक्टेयर की दर से गढ़ों में मिला देते हैं । ऐसा करने से पौधों को बीमारियों एवं कीटों से बचाया जा सकता है ।

पौध रोपण के तुरंत बाद गढ़ों में समय-समय पर आवश्यकतानुसार सिंचाई कर देनी चाहिए । बड़ी इलायची की अच्छी पैदावार के लिए 15 टन गोबर की खाद तथा 10 से 12 कुंतल नीम की खली या अरंडी की खली प्रति हैक्टेयर की दर से गढ़ों में मिलाते हैं इसके अतिरिक्त 30-40 किग्रा. नाइट्रोजन, 30 किग्रा. फॉस्फोरस एवं 50 से 30 किग्रा. पोटाश की आवश्यकता होती है । गोबर की खाद तथा फॉस्फोरस एवं पोटाश की कुल मात्रा गढ़ों की तैयारी के समय तथा नाइट्रोजन की कुल मात्रा 'ड्रेसिंग' के रुप में मई-जून तथा सितंबर-अक्तूबर में प्रयोग करनी चाहिए ।

बड़ी इलायची की फसल में मोजेक, केपसूल रॉट, नर्सरी लीफ स्पाट एवं डपिंग ऑफ नामक रोग लगते हैं । इसके बचाव के लिए बोर्डो मिश्रण या 1.0 प्रतिशत डायथेन का रोगानुसार छिड़काव करते हैं । कीटों में थ्रिप्स, एयरी केटरपीलर तथा सूट वॉकर फसल को हानि पहुंचाते हैं । इनके बचाव के लिए फ्यूराडान या बी.एच.सी. गामा पौध प्रत्यारोपण के समय गढ़ों

में डाल देते है । पत्तियों पर लगने वाले कीटों में नुवान का छिड़काव करना चाहिए । पौध प्रत्यारोपण के 3 वर्ष पश्चात फल प्राप्त होते हैं । अक्तूबर से दिसंबर तक फल समय-समय पर परिपक्व होते हैं। अच्छी प्रकार सूखे फलों को नमी रहित स्थानों पर भंडारित का लेते हैं ।

तीन वर्ष पश्चात् एक हैक्टेयर क्षेत्रफल से 5-6 कुंतल बड़ी इलायची प्राप्त होती है । आगामी वर्षों में लगातार उत्पादन में वृद्धि होती रहती है तथा चतुर्थ वर्ष से 8-10 कुंतल फल प्रति हेक्टेयर की उपज प्राप्त होती है । एक बार प्लांटेशन से इसकी फसल 8 से 10 वर्ष तक उपज देती है ।

आनंदसिंह बिष्ट
वनस्पति विज्ञान विभाग,
हे.न.ब. गढ़वाल विश्वविद्यालय, श्रीनगर, गढ़वाल

2. अंतरिक्ष कुछ नया-नया

आकाश का सौंदर्य अपने में ही सिमटा हुआ एक अद्भुत दृश्य है । इसका श्रृंगार ग्रहों और नक्षत्रों के बिना बिल्कुल अधूरा सा प्रतीत होता है ।

हाल ही में हमारे सौरमंडल में उपस्थित नौ ग्रहों के अलावा अमरीका के खगोलशास्त्रियों ने दसवां ग्रह खोज निकाला है जिसका नाम फिलहाल 2003 यूबी 313 रखा गया है । यह ग्रह पृथ्वी से 15 अरब किमी. दूर मीथेन बर्फ से आच्छादित, सूर्य का चक्कर लगाने वाला अब तक का सबसे तेज ग्रह है । कूपर बेल्ट में उपस्थित यह अब तक का सबसे चमकदार तथा प्लूटो से बड़ा ग्रह है ।

अमरीका की अंतरिक्ष संस्था (नासा) की दो अंतरिक्ष दूरबीनों हबल और स्पिट्जर द्वारा ली गयी तस्वीरों के अनुसार ग्रहों का निर्माण छोटे-छोटे आकार के तारों के चारों ओर धूल और गैस की परतों के चढ़ने से हुआ है । ज़्यादातर खगोलविदों का मानना है कि ग्रह नवीन तारों के चारों ओर चढ़ी गोलाकार धूल और गैस की परतें हैं और तारा जितना शैशव अवस्था में होगा धूल की परतें उतनी मोटी होंगी ।

हमारे सौर मंडल के बाहर भी बहुत से तारे और ग्रह हैं जिनको खोजा जा रहा है । अंतरिक्ष वैज्ञानिकों ने पहली बार एक ऐसे ग्रह को खोजा है जिसका संबंध किसी अन्य सौरमंडल से है । यूरोपीय वैज्ञानिकों ने इसे 'एक्सोप्लेनेट' नाम दिया । सौरमंडल के सबसे बड़े ग्रह बृहस्पति से पांच गुना बड़ा और दस गुना गर्म है । 'एक्सोप्लनेट' एक युवा भूरे और छोटे से तारे का चक्कर लगाता है । इस तारे का द्रव्यमान, चमक और तापमान कम है । यह ग्रह ब्राउन ड्वार्फ तारे के निकट और पृथ्वी से 230 प्रकाश वर्ष दूर है ।

नासा के स्पिट्जर स्पेस टेलिस्कोप ने सौरमंडल से बाहर स्थित दो सुदूर ग्रहों से आ रहे प्रकाश को कैद करके वैज्ञानिकों में खुशी की लहर फैला दी । स्पिट्जर के द्वारा इन दोनों ग्रहों से आ रहे इन्फ्रारेड प्रकाश को कैद किया । ये दोनों ग्रह मुख्य रूप से गैसों से निर्मित हैं और अपने पास के तारों के प्रकाश से चमकते हैं ।

ग्रहों की खोज 'एक्स्ट्रासोलर प्लेनेट्स' के अस्तित्व की पुष्टि 'वूबल विधि' द्वारा की जाती थी । कोई भी ग्रह किसी तारे की परिक्रमा करते हुए उस पर अपना गुरुत्वाकर्षण बल लगाता है, जिसके फलस्वरूप वह तारा अपनी जगह थोड़ा सा कंपन करता है, इसी विधि से तारे की उपस्थिति का अंदाजा लगाया जाता है । इसके अलावा एक दूसरी तकनीक 'ट्रांजिस्ट तकनीक' के अनुसार जब कोई ग्रह परिक्रमा करते हुए तारे व पृथ्वी के बीच आता है, तो तारे की चमक थोड़ी कम हो जाती है और ग्रह टिमटिमाता हुआ दिखाई देता है, जिससे ग्रह के अस्तित्व की पुष्टि होती है ।

नासा की हबल अंतरिक्ष दूरबीन ने एक बेहद नवीन सूर्य जैसे तारे को खोजने में सफलता हासिल की है, जो पांच करोड़ से दो करोड़ वर्ष पुराना समझा जाता है । तारे के चारों ओर धूल की परतें हैं, जिससे गैस का ग्रह बन सकता है; लेकिन पृथ्वी जैसे ग्रह का निर्माण करने में यह अभी भी छोटा है । हबल टेलिस्कोप से ग्रहों पर निगरानी रख रहे खगोलविद डेविड अरदिला के अनुसार इससे हमारे सौरमंडल के पुरातन जीवन का पता चलता है जिसके चारों तरफ धूल की काफी झीनी परत है । स्पिट्जर से दिखे तारों के चारों ओर धूल भरी प्लेटें ग्रहों के निर्माण की प्रक्रिया के अवशेष हैं । वर्तमान में ग्रह निर्माण प्रक्रिया में यह प्लेटें एक नवीन तारे के चारों ओर स्थित प्लेटों की तुलना में 100 गुना पतली हैं, इसलिए इन्हें देख पाना आसान नहीं है । स्पिट्जर से ग्रह पर नज़र रखने वाले वैज्ञानिक चार्ल्स बैकमेन ने कहा कि ऐसे छः तारों के बारे में पता चला है कि ये जिस मात्रा में ऊष्मा का उत्सर्जन कर रहे हैं, वह तारों की सतह से निकलने वाली ऊष्मा से 2-15 गुना अधिक है ।

वैज्ञानिकों ने एक ऐसी आकाशगंगा (गैलेक्सी) को ढूंढ़ निकाला है, जो अंधकारमय है । 'न्यू साइंटिस्ट' पत्रिका के अनुसार पृथ्वी से 5 करोड़ प्रकाश वर्ष दूर स्थित इस विशाल व अंधेरी गैलेक्सी में करोड़ों तारों के बराबर पदार्थ की मात्रा विद्यमान है । यह गैलेक्सी हाइड्रोजन गैस के विशाल बादल व रहस्यमय 'डार्क मैटर' से बनी है । उल्लेखनीय है कि ब्रह्मांड का अधिकांश भाग इस दिखाई न देने वाले डार्क मैटर से बना है ।

नासा ने अंतरिक्ष में तीन दर्जन चमकीली और सघन आकाशगंगाओं को खोजा है, जो 10 अरब साल पूर्व की छोटी आकाशगंगाओं जैसी नजर आती हैं । ये आकाशगंगाएं पृथ्वी से 2-4 अरब वर्ष दूर मानी जाती हैं । कैलिफोर्निया इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी के अनुसार नयी आकाशगंगाओं का निर्माण ब्रह्मांड से हो रहा है । गैलेक्स एट कैल्टेच के प्रमुख खोजकर्ता क्रिस मार्टिन के अनुसार अंतरिक्ष में कभी छोटी आकाशगंगाओं की बहुतायत रही होगी, जो परिपक्व होकर बड़ी हो गयीं ।

हमारा सौरमंडल जिस 'मिल्की वे' आकाशगंगा का हिस्सा है वह वर्गो क्लस्टर का हिस्सा है । इनमें से एक गैलेक्सी क्लस्टर्स आकार में बड़ा है, जिसमें 1000 आकाशगंगाएं समाहित

हैं, और दूसरा अपेक्षाकृत छोटा क्लस्टर है जिसमें 300 आकाशगंगाएं शामिल हैं। वैज्ञानिकों के अनुसार आकाशगंगाओं की इस टक्कर के कारण उत्पन्न भीषण 'शॉक-वेव' के कारण इनमें समाहित आकाशगंगाएं अपने पथ से विचलित हो जायेंगी। और करीब एक करोड़ डिग्री सेंटीग्रेड के तापमान वाली गैसें अंतरिक्ष में बिखर जायेंगी। इस टक्कर के कारण अंतरिक्ष में बेहद शक्तिशाली ब्रह्मांडयी तूफान का निर्माण होगा। यह भारी उथल-पुथल जब तक शांत होगी तब तक एक नयी आकाशगंगा का जन्म हो चुका होगा।

राशी मेहरोत्रा

द्वारा : श्री राम कुमार मेहरोत्रा, न्यू फ्रेंड्स कॉलोनी,
मो. हुंडाल खेल, शाहजहांपुर - 242 001.

3. दम तोड़ता क्योटो-समझौता

धरती के तापमान में हो रही अनवरत वृद्धि आज मानवता के लिए सबसे प्रमुख चुनौती के रूप में सामने आयी है। वास्तव में यह समस्या वायुमंडल में एक निश्चित मात्रा में पायी जाने वाली कुछ ऊष्मारोधी गैसों की मात्रा में वृद्धि हो जाने से जुड़ी हुई है। कार्बन डाई-ऑक्साइड सदृश कुछ गैसों जैसे - क्लोरोफ्लोरो कार्बन (सी.एफ.सी.), नाइट्रिक ऑक्साइड, क्लोरो ऑक्साइड एवं मीथेन आदि इसके लिए उत्तरदायी हैं, जो पृथ्वी के चारों ओर बागवानी में प्रयोग किये जाने वाले "ग्रीन हाउस" के जैसा एक ऐसा आवरण बना लेती हैं, जो सूर्य की विकिरण-ऊष्मा को धरती तक आने तो देती हैं, परंतु धरती से टकराकर उत्सर्जित होने वाली ऊष्मा को बाहर नहीं जाने देतीं। फलस्वरूप वायुमंडल के तापमान में लगातार वृद्धि होती जा रही है। सामान्य तौर पर इस घटना को "ग्रीन-हाउस प्रभाव" के नाम से जाना जाता है।

धरती के तापमान में वृद्धि के ठोस प्रमाण 1988 के उत्तरार्ध से मिलने प्रारंभ हो गये थे। नासा के जेम्स ई. हेन्सन एवं उनके सहयोगियों ने 1960 से 1987 तक के भूमंडलीय तापमानों का विधिवत विश्लेषण किया तथा यह बताया कि इस दौरान केवल कार्बन-डाई-ऑक्साइड की मात्रा में 5% की वृद्धि हुई है तथा पृथ्वी के तापमान में 0.5 से 0.7 डिग्री सेल्सियस तक वृद्धि हुई।

धरती के बढ़ते तापमान तथा जलवायु-परिवर्तन संबंधी हुए अब तक के सभी अध्ययनों का निष्कर्ष अत्यंत चिंताजनक है। "वर्ल्ड-वाच इन्स्टीट्यूट" की एक रपट के अनुसार धरती के लगातार बढ़ रहे तापमान के कारण ध्रुवों व हिमशिखरों पर जमी बर्फ पिघलने लगी है, समुद्र का तल धीरे-धीरे ऊंचा उठ रहा है। 0.1 से 0.3 सेमी. प्रतिवर्ष की वर्तमान वृद्धि दर से पिछले सौ वर्षों में समुद्र तल लगभग 18 सेमी. ऊंचा उठा है। अनुमानतः अगले सौ वर्षों में दुनिया के लगभग 50 प्रतिशत समुद्रतटीय क्षेत्र डूब जायेंगे। यही नहीं, वातावरण के लगातार गर्म होने से मौसम संबंधी अनेक परिवर्तन भी अवश्यंभावी हैं। धरती का एक बड़ा भू-भाग सूखे की चपट में आ-जायेगा, फसलों व वनस्पतियों की भारी क्षति होगी, कीड़े-मकोड़ों का प्रकोप बढ़ जायेगा तथा भुखमरी एक विश्वव्यापी समस्या बन जायेगी।

वैश्विक ऊष्मा वृद्धि के प्रभाव को कम करने हेतु राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर अनेक उपाय किये गये हैं। इनमें से एक है, जापान के क्योटो शहर में दिसंबर 1997 में क्योटो जलवायु समझौता संपन्न हुआ।

11 दिसंबर 1997 को क्योटो (जापान) में संपन्न विश्व जल-वायु सम्मेलन में 159 देशों के प्रतिनिधियों ने 11 दिनों तक बढ़ते वैश्विक तापमान व जलवायु परिवर्तन पर गंभीर चर्चा की तथा प्रोटोकॉल के रूप में यह स्वीकार किया कि विकसित देश विभिन्न ग्रीन हाउस गैसों के औसत वार्षिक उत्सर्जन को 2008 से 2012 के बीच, 1990 के औसत उत्सर्जन से 5.2% कम के स्तर पर नियंत्रित करेंगे।

इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए चरणबद्ध कार्यक्रम तय किये गये। 1990 में उत्सर्जित होने वाले धुएं को पैमाना मान कर विभिन्न देशों के लिए अलग-अलग लक्ष्य तय किये गये, जिसके अनुसार अमरीका को 7%, जापान को 6%, स्वीटजरलैंड को 8%, यूरोपीय संघ को 8%, कनाडा, हंगरी, और पोलैंड को 6%-की कमी करने हेतु अपेक्षा की गयी। साथ ही रूस, न्यूजीलैंड, और यूक्रेन जैसे देशों से अपने कार्बन-डाई-ऑक्साइड की तात्कालिक उत्सर्जन दर को ही स्थिर करने का निर्देश दिया गया। वहीं आस्ट्रेलिया को 8%, नार्वे को 1%, और आईसलैंड को 10% उत्सर्जन वृद्धि की छूट दी गयी। कुल मिलाकर 38 विकसित देशों को इस कटौती के दायरे में लाया गया। चीन व भारत सहित सभी विकासशील देशों को इस कटौती से मुक्त रखा गया।

क्योटो के इस ऐतिहासिक लक्ष्य को पूरा करने के लिए अनेक आवश्यक उपायों पर भी सदस्य देशों में आपसी सहमति बनी। सम्मेलन में सदस्य देशों से अपेक्षा की गयी कि वे अपने-अपने देशों में प्रयोग किये जाने वाले जीवाश्म ईंधनों जैसे-लकड़ी, कोयला, पेट्रो-उत्पादों के स्थान पर ऐसे ईंधनों के स्रोत खोजें तथा उन पर शोध कर उनके व्यापक प्रयोग का प्रयास करें जिनसे कम से कम कार्बन तत्त्वों का उत्सर्जन हो। साथ ही इस बात पर भी विशेष बल दिया गया कि ऐसी नयी तकनीकों का विकास किया जाय जिनमें ईंधन की खपत व कार्बन-उत्सर्जन दोनों ही न्यूनतम हों। सदस्य-देशों में जीवाश्म-ईंधनों पर अपने-अपने देश में दी जाने वाली सरकारी छूट (सब्सिडी) को हटा लेने पर भी आपसी सहमति बनी।

आज इस समझौते को आठ वर्ष हो चुके हैं। आज पुनः क्योटो चर्चा का विषय बना हुआ है जिसका कारण निर्धारित लक्ष्य की ओर हमारे बढ़ते कदम न होकर, प्रमुख सदस्य देशों का नकारात्मक रवैया है।

सिद्धांततः सहमत होने के बाद भी अमरीका ने इस समझौते से स्वयं को अलग कर लिया है, जबकि ग्लोबल-वार्मिंग के लिए उत्तरदायी गैसों की कुल मात्रा के एक चौथाई

भाग का उत्सर्जन वह अकेले ही करता है। इस समझौते को 2001 में ही लागू हो जाना था परंतु यह लागू हुआ 16 फरवरी 2005 को। न्यूयॉर्क स्थित संयुक्त राष्ट्र मुख्यालय में इस समझौते पर 35 औद्योगिक देशों ने हस्ताक्षर किये। अमरीका और ऑस्ट्रेलिया ने हस्ताक्षर करने से मना कर दिया। हालांकि चीन के साथ-साथ भारत को भी इससे मुक्त ही रखा गया है, फिर भी भारत ने इसके प्रति अपनी चिंता व समझौते में अपनी आस्था प्रकट की है।

विश्व-समुदाय में 'शक्तिशाली' और उन्नत अर्थव्यवस्था वाले देश अमरीका का इस समझौते को अपनी अर्थव्यवस्था के लिए घातक कह बहाना बनाते हुए पीछे हट जाना विश्वव्यापी चिंता व आक्रोश का विषय है। जो देश अपनी सैन्य-शक्ति के बल पर दुनिया से 'आतंकवाद की समाप्ति' का अभियान चला रहा हो, उसे 'ग्लोबल-वार्मिंग' जैसी भयावह समस्या से कुछ भी लेना-देना नहीं है। अमरीका के आर्थिक हितों के विरुद्ध लगने वाले इस समझौते को जार्ज बुश ने रद्दी की टोकरी में फेंक दिया है। अपने देश की संपन्न आबादी का उच्च जीवन स्तर बनाये रखने के लिए बुश-सरकार को पूरी मानव जाति के हितों से भी ऊपर अमरीका का औद्योगिक व आर्थिक हित ही दिखता है। दुनिया से जंगल मिट जायें, हरे-भरे खेत रेगिस्तान में बदल जायें, समुद्रों का जल-स्तर बढ़ने से बाढ़ आ जाये या सूखे के कारण पेयजल व खाद्यान्न का गंभीर संकट आ जाये, अमरीका को इससे कुछ लेना-देना नहीं।

अमरीका की इस प्रवृत्ति के कारण इस ऐतिहासिक व विश्व के पर्यावरणीय दृष्टि से सचेत जनमत के सबसे परिपक्व व साहसिक प्रयास की सफलता संदिग्ध हो गयी है। ऐसा समझा जा रहा है कि अमरीका की देखा-देखी, हस्ताक्षर करने वाले अन्य देश भी क्योटो समझौते से पीछे हट सकते हैं। वैसे तो इस वर्ष के अंत तक कनाडा के मांट्रियल शहर में इस पर औपचारिक फैसला होना है, लेकिन हाल में जी-8 की ब्रिटेन में हुई बैठक में यह साफ संकेत आये कि अमरीका की मर्जी बदलने का मुद्दा जी-8 में भी नहीं है और 2008 तक, यानी बुश के राष्ट्रपति रहते, अमरीका, क्योटो समझौते पर हस्ताक्षर नहीं करने वाला है। ऐसा हुआ तो क्योटो-समझौता अपनी ही मौत मर जायेगा क्योंकि 2012 में पूरा होने वाले इसके प्रथम चरण के खाते में दिखाने लायक कुछ भी नहीं बचेगा।

अरुण कुमार पांडेय प्रवक्ता-पर्यावरण विज्ञान,
डॉ. राम मनोहर लोहिया अवध विश्वविद्यालय,
फैजाबाद - 242 001. (उ. प्र.)

4. अंतरिक्ष में ग्रहों की परेड

मनुष्य को चांद-सितारों ने हमेशा आकर्षित किया है। वह इन्हें सदियों से निहारता आया है और इनके नये-नये रहस्य खोजने में लगा रहा है। उसने धूमकेतु और उल्काएं देखीं और चंद्रमा की कलाओं, चंद्र ग्रहण और सूर्यग्रहण से प्रभावित होकर जाना कि इसके लिए सूर्य, पृथ्वी और चंद्रमा का विशेष स्थितियों में एक सीध में आना ही ऐसी घटनाओं के लिए जिम्मेदार है। मनुष्य ने अंतरिक्ष में जितना झांका, उतने ही नये रहस्यों से पर्दा उठता गया। नये रहस्योद्घाटन, नयी मान्याताओं को जन्म देते हैं जो विज्ञान के प्रति अभिरुचि बढ़ाने के साथ-साथ हमारी वैज्ञानिक मनोवृत्ति में अभिवृद्धि करते हैं। विज्ञान के प्रति अभिरुचि बढ़ने का ही परिणाम है कि आज जब कोई वैज्ञानिक घटना घटती है, तो वह तुरंत जन सामान्य में चर्चा का विषय बन जाती है।

वर्ष 2005 में एक बार फिर रविवार 31 जुलाई को बुध-शुक्र के साथ शनि ग्रह लगभग एक दिशा में आ गये। तीनों 1.3 डिग्री कोण के अंदर थे। शनिवार को तीनों ग्रहों की निकटता देखने के लिए नक्षत्रशालाओं में जुटे लोगों को काफी निराशा हुई। क्षितिज साफ नहीं था। बादलों के कारण ग्रहों को देखा नहीं जा सका। ग्रहों को देखने के लिए कुछ ज्यादा ही उत्साहित लोग शाम सूरज ढलने के बाद इन ग्रहों की परेड (एलाइनमेंट) देखने के लिए कुछ ज्यादा ऊंचे स्थानों पर पहुंच गये, जहां से पश्चिम में क्षितिज साफ दिखता था लेकिन बादलों को उनका जोश पसंद नहीं आया। बादल नहीं हटे और सबको निराश लौटना पड़ा।

खगोलशास्त्रियों के अनुसार इस बार 4 जुलाई को तीनों ग्रहों का कोणीय क्षेत्र 31 जुलाई की अपेक्षा अधिक बढ़ गया लेकिन बुध और शुक्र और ज्यादा निकट हो गये। दोनों के बीच केवल 0.1 डिग्री का कोण रहा यानी दोनों ग्रह लगभग एक दिशा में रहे। इस बार की परेड में ग्रहों की निकटता शुक्रवार से ही शुरू हो गयी। इलाहाबाद स्थित जवाहरलाल नेहरू नक्षत्रशाला के निदेशक प्रमोद पांडेय के अनुसार ऐसी युति कई बार बनती है कि दो ग्रह एक दिशा में आ जायें, लेकिन शुक्र, बुध और शनि एक दिशा में हों, ऐसी युति वर्ष 1970 के बाद से नहीं बनी। शनिवार को तमाम प्रयासों के बाद भी इनकी निकटता नहीं देखी जा सकी। बादलों से पूरा क्षितिज ढका था, जिसके कारण अनुमानित समय से पहले ही अंधेरा हो गया। वर्ष 2006 में भी यह स्थिति बनेगी, लेकिन तब इसे देखा नहीं जा सकेगा, क्योंकि ये ग्रह सूर्य के पास होंगे। सूर्य के प्रकाश में इन्हें देखना संभव नहीं हो सकेगा।

वैसे मंगल ग्रह 30 अक्तूबर, 2005 को पृथ्वी के करीब, 6 करोड़ 90 लाख किलोमीटर दूरी पर था, लेकिन 27 अगस्त, 2003 के दिन, जब मंगल 60 हजार वर्ष बाद पृथ्वी से 5 करोड़ 58 लाख किलोमीटर निकट तक पहुंच गया था, मनुष्य के अब तक ज्ञात इतिहास की सर्वाधिक बड़ी खगोलीय घटना को दुनिया के करोड़ों लोगों ने बहुत कौतूहल के साथ निहारा। रोचक तथ्य यह है कि इससे पूर्व जब मंगल पृथ्वी के इतने करीब आया होगा, तो उस समय आधुनिक मनुष्य अस्तित्व में ही नहीं होगा, तब प्लेस्टोसीन काल में नियंडरथल मानव ने नभमंडल में ऐसे ही मंगल को कौतूहल से निहारा होगा, उस दिन भी सूर्य, पृथ्वी और मंगल एक कतार में थे।

विशेषज्ञों के अनुसार ग्रहों-नक्षत्रों की परेड अर्थात उनका एक कतार में आना कोई नयी घटना नहीं है। 20 अप्रैल से 4 मई, 2002 के दौरान बुद्ध, शुक्र, मंगल, शनि और बृहस्पति ग्रह आकाश में एक सीध में दिखायी दिये थे। 22 अप्रैल को पांचों ग्रह सर्वाधिक सरल रेखीय पथ पर थे, इस कारण पांचों ग्रह एक सरल रेखा के रुप में नज़र आये, जिसे रात के आकाश में नंगी आंखों से भी देखा गया।

उत्तरांचल स्थित नैनीताल वेधशाला के वरिष्ठ वैज्ञानिक डॉ. वहाब उद्दीन के अनुसार एक अत्यंत दुर्लभ नक्षत्रीय घटना के रुप में हमारे सौरमंडल के ग्रहों की परेड के अंतर्गत ग्रहों का एक सीध में दिखाई देना मात्र एक दृष्टि भ्रम है। जो भी हो, वर्ष 2002 में अमरीकी अंतरिक्ष वेधशाला के वैज्ञानिक ज्याफ चेस्टर सहित दुनिया भर के वैज्ञानिक इस घटना को लेकर काफी उत्साहित रहे, वहीं सामान्य जनमानस में भी इस अनोखी खगोलीय घटना को देखने को लेकर उत्साह देखा गया।

बीती शताब्दी के वर्ष 1997 में जहां पूर्ण सूर्य ग्रहण और हेलबाप धूमकेतु जैसी खगोलीय घटनाएं घटित हुईं, वहीं 18 से 22 नवंबर माह के तीसरे सप्ताह में सूर्यास्त के ठीक आधे घंटे बाद आठ ग्रहों की परेड में, पांच ग्रहों को कोरी आंखों से देखा जा सका। उस समय सूर्यास्त के बाद यानी शाम 6 बजे से सवा 6 बजे के बीच सौरमंडल के सभी ग्रहों को एक सीध में देखा गया, जिसमें पांच ग्रहों, बुद्ध, शुक्र, मंगल, बृहस्पति और शनि को तो कोरी आंखों से, बाकी के तीन ग्रह, यूरेनस, नेपच्यून व प्लूटो को दूरबीन की मदद से देखा गया। वर्ष 2002 में भी ग्रहों के समूहन की ऐसी ही एक घटना घटित हुई, जब 10 मार्च को एक बार फिर आठ ग्रह वृत्पाद (क्वाड्रेंट) में आ गये थे। सभी ग्रहों की परेड के नज़ारे ने आम लोगों को आकर्षित किया। इससे पूर्व वर्ष 2000 में इसी तरह की एक खगोलीय घटना घटित हुई थी, जिसमें सौर मंडल के सभी ग्रहों ने, पृथ्वी और चंद्रमा के साथ, एक कतार में आकर एक अद्भुत नजारा प्रस्तुत किया था। 5 मई, 2000 को घटित इस घटना में मंगल से शनि ग्रह और चंद्रमा, सभी पृथ्वी के साथ 17 डिग्री के कोण और यूरेनस 25 डिग्री के कोण के भीतर आ गये थे। केवल नेपच्यून और प्लूटो इससे बाहर रहे। अब 8 सितंबर, 2040 को ऐसी घटना घटित होने की वैज्ञानिकों ने भविष्यवाणी की है।

नेहरु तारामंडल की डॉ. निरुपमा राघवन के अनुसार प्राचीन काल में जब उत्तरायण (विंटर सोल्सटिस) के समय ऐसे ग्रहों का समूहन होता था, तब नये युग के शुरुआत का निर्धारण होता था। आर्यभट्ट ने 5वीं सदी ई. पू. जो गणना की थी, वह वास्तव में ऐसा ही ग्रह समूहन का प्रयोग था। यह सुयोजन फरवरी 17-18 के दिन ईसा पूर्व 3102 हुआ माना जाता है। आधुनिक गणना भी यही बताती है कि कोरी आंखों से दिखने वाले सब ग्रह उस तिथि के आस-पास एक साथ थे, यूरेनस, नेप्च्यून और प्लूटो की जानकारी उन दिनों नहीं थी।

रिसेप्टिव एसेंशियल साइंटिफिक एजूकेशन एड्वांसमेंट रिसर्च कमेटी फॉर ह्यूमनिटी (रिसर्च) के निदेशक इरफान ह्यूमन के ग्रहों के इस प्रकार एक कतार में आने पर सामान्यता लोग भीषण बाढ़, गर्मी, भूकंप, ज्वालामुखी विस्फोट, आंधी और तूफान आदि की आशंका से भयभीत हो जाते हैं जबकि यह कोरी कल्पना है। यद्यपि चंद्रमा के गुरुत्वाकर्षण से समुद्र में ज्वार-भाटे की स्थिति अवश्य बनती है लेकिन इन समस्त ग्रहों के गुरुत्वाकर्षण का संयुक्त प्रभाव अपनी निकटता के कारण अकेले चंद्रमा के प्रभाव से लगभग ही रहता है। अंतरिक्ष में होने वाली ग्रहों-नक्षत्रों की ऐसी अनोखी परेड और उनके पृथ्वी पर प्रभाव को लेकर वैज्ञानिक शोधरत हैं।

रुफिया ख़ान

कार्यकारी संपादक, साइंस टाइम्स,

67 अन्टा, निकट मोहनी स्कूल, शाहजहांपुर - 242001.

5. सौर मंडल के 66 चंद्रमा (उपग्रह)

हमारे सौर मंडल में 66 चंद्रमा अपने-अपने ग्रहों का चक्कर लगा रहे हैं किंतु हमें दूरी अधिक होने के कारण केवल पृथ्वी ग्रह का चंद्रमा दिखाई पड़ता है जो कभी पृथ्वी से 405500 किलोमीटर दूर रहता है, और कभी 363300 किलोमीटर दूर हो जाता है। चंद्रमा का व्यास 3476 किलोमीटर है। हमारा चंद्रमा अपनी धुरी पर 29 दिनों में एक चक्कर लगाता है और इतनी ही अवधि में पृथ्वी का भी एक चक्कर ! इसीलिए तो हमें चंद्रमा का दूसरी तरफ का भाग कभी दिखाई ही नहीं पडता। आकाश में पृथ्वी के चंद्रमा के अतिरिक्त अन्य चंद्रमाओं के निकलने और डूबने के बीच की अवधि अलग-अलग है, क्योंकि सभी ग्रहों का एक दिन 24 घंटे का नहीं होता। बुद्ध ग्रह और शुक्र ग्रह का कोई चंद्रमा नहीं है। अन्य ग्रहों के चंद्रमाओं का विवरण निम्नांकित है :-

पृथ्वी से 54400000 किलोमीटर दूर मंगल ग्रह के आकाश पर दो चंद्रमा दिखाई पड़ते हैं। मंगल ग्रह का एक दिन 24.5 घंटे का होता है। इसके फोबोस नामक चंद्रमा का व्यास 27 किलोमीटर है और यह अपने ग्रह से 9400 किलोमीटर की ऊंचाई पर है। यह चंद्रमा 7 घंटा 39 मिनट में अपने ग्रह का एक चक्कर लगाता है। डिमोस नामक चंद्रमा का व्यास 16 किलोमीटर की ऊंचाई पर है और वह 30 घंटे में अपने ग्रह का एक चक्कर लगाता है।

पृथ्वी से 575200000 किलोमीटर दूर बृहस्पति ग्रह के आकाश पर 16 चंद्रमा दिखाई पड़ते हैं जिनमें सबसे बड़े जेनीग्रीड नामक चंद्रमा का व्यास 5326 किलोमीटर है। कैलिस्टो नामक चंद्रमा का व्यास 4800 किलोमीटर है। गुलाबी बर्फ से ढंका युरोपा नामक चंद्रमा का व्यास 3140 किलोमीटर है। लो नामक चंद्रमा तथा लीडा नामक चंद्रमा के व्यास क्रमशः 3630 किलोमीटर तथा 16 किलोमीटर हैं। बृहस्पति ग्रह का एक दिन 10 घंटे का होता है।

पृथ्वी से 1236800000 किलोमीटर दूर शनि ग्रह के आकाश पर 23 चंद्रमा दिखाई पड़ते हैं, जिनमें सबसे बड़े

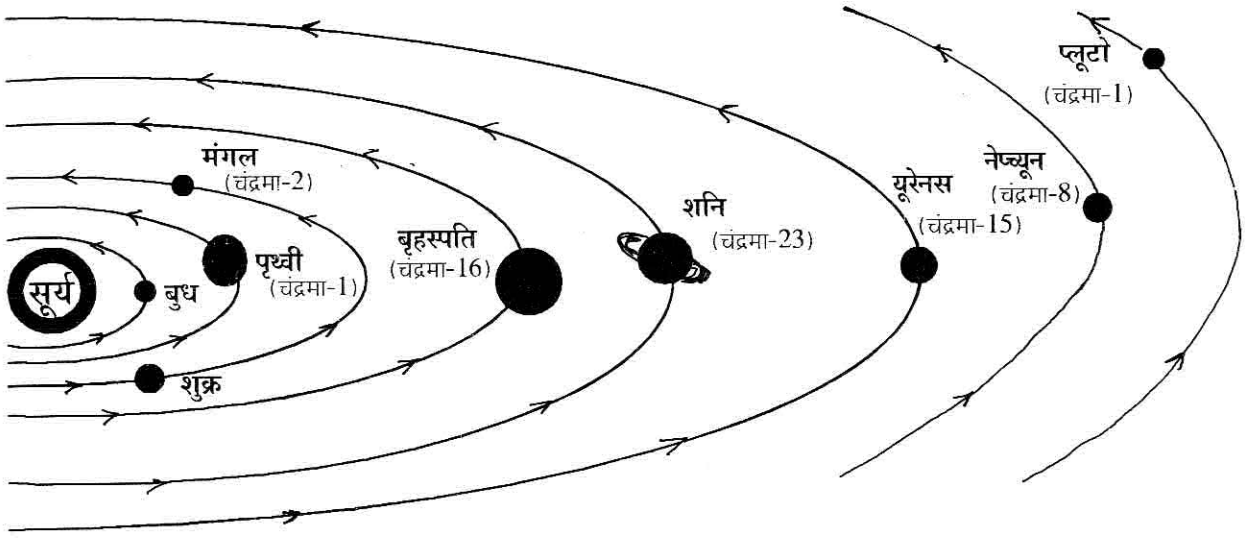

चित्र 1 : सौर मंडल के 66 चंद्रमाओं (उपग्रह) का विवरण

टाइटन का व्यास 5150 किलोमीटर है, जो शनि से 1222000 किलोमीटर दूर है। टाइटन पर नाइट्रोजन और ऑर्गेनिक अणुओं से निर्मित घना वातावरण है, इसलिए वैज्ञानिकों का अनुमान है कि वहां जीवन की संभावना है। शनि के आकाश पर गिमास नामक चंद्रमा का व्यास 390 किलोमीटर है। शनि ग्रह का एक दिन 10.5 घंटे का होता है।

पृथ्वी से 2550400000 किलोमीटर दूर युरेनस के आकाश पर 17 चंद्रमा दिखाई पड़ते हैं, जो 50000 किलोमीटर से 12000000 किलोमीटर अपने ग्रह से दूर हैं। सभी बर्फ से ढंके हैं। सबसे छोटे चंद्रमा का व्यास 470 किलोमीटर है। चार सबसे बड़े चंद्रमा एरियल, अंबरील, टाइटेनिया तथा ओबेरान का व्यास क्रमश: 1160 किलोमीटर, 1176 किलोमीटर, 1580 किलोमीटर तथा 1520 किलोमीटर है। युरेनस का एक दिन 17.2 घंटे का होता है।

पृथ्वी से 4246400000 किलोमीटर दूर नेप्च्यून के आकाश पर 8 चंद्रमा रात में दिखाई पड़ते हैं। टाइटन नामक चंद्रमा का व्यास 27 किलोमीटर है, जो अपने ग्रह की विपरीत दिशा में चक्कर लगाता है। इसलिए इसकी गति धीरे-धीरे कम होती जा रही है। वैज्ञानिकों का अनुमान है कि 100 मिलियन वर्षों में यह चंद्रमा अपने ग्रह में समा कर विलीन हो जायेगा। निरिडा नामक चंद्रमा का व्यास 340 किलोमीटर है। नेप्च्यून का एक दिन 16 घंटे का होता है।

पृथ्वी से 5216800000 किलोमीटर दूर प्लूटो के आकाश पर हमारी पृथ्वी की तरह केवल एक चंद्रमा दिखाई पड़ता है। इस चंद्रमा का व्यास 1200 किलोमीटर है और यह चंद्रमा अपने ग्रह से 24000 किलोमीटर दूर है। प्लूटो का एक दिन हमारे 64 दिन के बराबर होता है।

उदयवीर सिंह

एच.आई.जी., 12 प्रीतम नगर, इलाहाबाद - 211 011.

6. खेल और शारीरिक क्षमता

हम जब भी मुंबई से राजस्थान की ओर जाते हैं, और वहां से वापस मुंबई आते हैं तो हम अलग-अलग मात्रा में पानी पीते हैं। राजस्थान जाते समय हम अधिक पानी पीते हैं और आते समय कम। कुछ लोगों का यह मानना हो सकता है कि गर्म क्षेत्रों की ओर जाते समय पानी अधिक पीते हैं। हम जब भी पृथ्वी के विभिन्न भौगोलिक और गुरुत्व क्षेत्रों में प्रवेश करते हैं, तब हमारा शरीर पानी की मात्रा को घटाता बढ़ाता रहता है। मुंबई से राजस्थान जाते समय हमारा औसत वजन दो किलो कम हो जाता है, मगर हमारी शारीरिक क्षमता कम नहीं होती। हमारे शरीर में जो कम होता है, वह केवल पानी का औसत है, जब हम मुंबई की ओर आते हैं तब हमारा शरीर फिर से अतिरिक्त पानी की मांग करता है। यही प्रमुख कारण है कि सब साधन-सुविधा के होते हुए भी मुंबई में पला बढ़ा खिलाड़ी राष्ट्रीय स्तर का भी एथलीट नहीं बन सकता, जबकि यह शहर पूरी दुनिया के बराबर 'क्रिकेटर' दे सकता है।

पानी शरीर में आवश्यक तत्त्व है, मगर यह हमको शक्ति नहीं देता है। जिस व्यक्ति के शरीर में पानी का औसत जितना कम होगा, तैलीय एवं संयुक्त तत्त्व जितने अधिक होंगे - उसकी शारीरिक क्षमता उतनी ही अधिक होगी। अभ्यास करने से हमारे शरीर की या किसी अंग की क्षमता क्यों बढ़ती है ? इसका कारण यह है कि हम जब भी शरीर या अंग को गति या व्यायाम देते हैं, तो हमारी मांसपेशियों से अवांछित तत्त्व अपने आप अलग होने लगते हैं। वे पसीने, कार्बन-डाई-ऑक्साइड एवं अन्य तत्त्वों के रुप में शरीर के बाहर निकलते हैं। फिर जिन तत्त्वों की मांसपेशियों में कमी पड़ती है, शरीर उनका संग्रह करता है। बार-बार ऐसा करने पर शरीर अनावश्यक तत्त्वों का निष्कासन एवं आवश्यक तत्त्वों का संग्रह करता है। इस तरह

शरीर एवं अंग अधिक क्रियाशील और शक्तिशाली होता है। एक व्यक्ति जो बचपन से ही बायें हाथ से काम करता है तो उसका बायां हाथ दायें हाथ से अधिक कुशल एवं शक्तिशाली होगा। मगर एक बात आप जान लीजिए कि चूड़ी और जूता पहनने वाले पहले दाहिने हाथ और पांव में पहनाते हैं, क्योंकि मनुष्य आदि काल से ही दाहिने हाथ-पांव का अधिक प्रयोग करता आ रहा है। हमारे दाहिने अंग थोड़े बड़े एवं भारी होते हैं।

इसलिए जब किसी खेल या कार्य में चरम सीमा को छूने की बात होती है, तो अभ्यास करना पर्याप्त नहीं होता, क्योंकि पृथ्वी पर भिन्न-भिन्न प्रकार के भौगोलिक और गुरुत्व क्षेत्र हैं। आप किस भौगोलिक क्षेत्र में जन्मे एवं कितने वर्ष रहे हैं, आपके पूर्वज किस भौगोलिक और गुरुत्व क्षेत्र में कितने वर्ष रहे हैं, और किस शारीरिक क्षमता वाला कार्य किया है, इस सबका प्रभाव शारीरिक क्षमता पर पड़ता है। अगर यह क्षमता किसी खेल के लिए उपयुक्त है, तो हम अभ्यास और तकनीकी जानकारी लेकर चरम सीमा को छू सकते हैं। कितने ही अश्वेत लोगों के अमरीका में बस जाने पर भी उनकी अफ्रीकी क्षमता आज भी विद्यमान है। भारत एक औसत भौगोलिक क्षेत्र है इसलिए हमारी शारीरिक क्षमताएं भी औसत हैं, फिर भी बहुत सारे खेल ऐसे हैं, जिसमें भारतीय चरम सीमा को छू सकते हैं।

पश्चिम बंगाल, फुटबाल अधिक खेलता है मगर बांग्लादेश हमारी राष्ट्रीय फुटबाल टीम को आराम से हरा देता है। मगर गोवा के भूगोल में पुर्तगाली फुटबाल का असर आने वाले कई वर्षों तक रहेगा।

भारत में अच्छे धावक दक्षिणी भारत के भूगोल में ही होंगे, मगर उनसे अच्छे श्रीलंका में मिल जायेंगे। शारीरिक लचीलेपन में ठंडे प्रदेशों वालों की बराबरी अफ्रीकी नहीं कर पायेंगे।

बराबर वजन में चीन का भारोत्तोलक जीतता है, तो हमारे हारने वाले खिलाडी की तुलना में उसके शरीर में पानी का औसत कम होता है।

हम अपने भारोत्तोलक की क्षमता बढ़ाने के लिए दक्षिणी चीन, जापान, ताईवान, भूटान एवं आसाम भेज सकते हैं, मगर उसे हिमालय के उस पार कजाकिस्तान भेजकर हम उसकी क्षमता बढ़ाते नहीं बल्कि घटाते हैं। इस तरह की बहुत सारी बातें हैं जो हमें जाननी आवश्यक हैं।

पृथ्वी पर ऐसे बहुत सारे क्षेत्र हैं, जहां विशेष भौगोलिक वातावरण के साथ एक विशेष गुरुत्व मान भी होता है। दक्षिणी ध्रुव, उत्तरी ध्रुव एवं भूमध्य रेखा के समीप रहने वाले लोग अलग-अलग गुरुत्व से प्रभावित होते हैं। यही गुरुत्व क्षेत्र और भौगोलिक वातावरण हमारा रुप-रंग, कद-काठी, शारीरिक योग्यता तय करते हैं।

रामचंद्र खिलेरी
कमरा नं. 2 बराडकर लेन, दामली पाड़ा,
कलीना, मुंबई - 400 029.

सूर्य : ऊर्जा का स्वच्छ अपारंपरिक स्रोत

(पृष्ठ 24 का शेष भाग....)

के अंदर विद्युत सेल इलेक्ट्रॉनिक असमानता के द्वारा उत्पन्न किया जा सकता है। इसको या तो पी-एन जंक्शन या फिर 'शॉट की अवशोषण' के स्पर्श द्वारा प्राप्त किया जा सकता है (चित्र-5)। पी एन जंक्शन का ट्रांजिस्टर तथा परिशोधक में बहुतायत से प्रयोग होता है। अतः अधिकतर एक कैल्शियम Si, GaAs, CdTe या चूर्ण अथवा बहु-कैल्शियम Si का प्रयोग करके समान जोड़ (होमो-जंक्शन) उत्पन्न किये जा सकते हैं।

सौर-सेल बनाने के अनेक तरीके हैं। जिनमें एक कैल्शियम Si द्वारा, बहु-कैल्शियम Si द्वारा, अथवा पतली फिल्म आदि द्वारा निर्माण के तरीके प्रमुख हैं। इसकी अवशोषण क्षमता (29%) अधिक होने के कारण इनकी उपयोगिता अधिक है। बहुत सारे तरीके CdS, CdTe सतह उत्पन्न करने के लिए प्रयोग में लाये जाते हैं। इन सभी पदार्थों की क्षमता पांच सालों तक क्षीण नहीं होती। पतली फिल्म वाले सौर-सेलों के निर्माण में अपेक्षाकृत कम पदार्थ की आवश्यकता होती है। TiO_2 के नैनो कणों, जिनको कि आर यू कॉम्प्लेक्स डाई द्वारा संवेदनशील बनाया जाता है, से तैयार सौर-सेल काफी कम मूल्य के तथा स्थिर पाये गये हैं।

फोटो-वोल्टीय मॉडल पर आधारित कई उपकरणों का निर्माण किया गया है, जिनका उपयोग जल-पंपिंग, टी.वी. चलाने, रेफ्रिजरेटर आदि में किया जाता है।

जल-पंपिंग के लिए सौर-पंप विकसित किये गये हैं। भारत में सी ई एल साहिबाबाद, बी एम ई एल बंगलौर, टाटा बी पी आदि इसके निर्माण में संलग्न हैं। भारत में लगभग 4500 से अधिक सौर-पंप लगाये जा चुके हैं। सऊदी अरब में 350 kW, कैलीफोर्निया में 6.5 MW, जापान में 1 kW तक की क्षमता वाले फोटो-वोल्टीय संयंत्र स्थापित हो चुके हैं। पश्चिमी देशों में पॉली विनायल (पी.वी.) क्लैडिंग युक्त छतों वाले घरों का निर्माण किया गया है। जॉर्ज टॉउन यूनिवर्सिटी, वाशिंगटन के कैंपस में एक छः मंजिला अध्यापन कक्ष में 300 kW का फोटो-वोल्टीय तंत्र लगाया गया है। यूरोप में भी इस प्रकार की छतें बनायी गयी है। अमरीका में लगभग 1 मिलियन पी. वी. युक्त छतें बनाने की योजना है। CAZRI जोधपुर में पॉली विनायल तंत्रों सिस्टम पर काफी कार्य किया गया है तथा इसकी कीमत कम करने के लिए मिरर-बूस्टर प्रयुक्त किया गया है।

दूर-दराज क्षेत्रों में पौधों के संरक्षण के लिए सौर-पी.वी. सिस्टम काफी उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं। CAZRI जोधपुर इस प्रकार के कम मूल्य वाले सिस्टम विकसित कर रहा है।

विज्ञान प्रेमी व्यक्तित्व :

पोप जॉन पॉल द्वितीय : कुछ रोचक जानकारियां

डॉ. देवकी नंदन

ए-304-बी, हृषीकेश, लोखंडवाला कॉम्प्लेक्स, अंधेरी (प.), मुंबई 400 053

100 करोड़ से अधिक रोमन कैथोलिक ईसाइयों के प्रिय धर्मगुरू 84 वर्षीय पोप जॉन पॉल द्वितीय के निधन पर विश्व के हर संप्रदाय ने अपनी संवेदना व्यक्त की । आश्चर्य नहीं कि शोकाकुलों में वैज्ञानिक-वृंद भी अग्रणी रहा । इसका कारण यह है कि पोप जॉन पॉल द्वितीय सचमुच ऐसे पहले पोप थे जिन्होंने अपनी विज्ञान-दृष्टि तथा अपने बहादुरी पूर्ण वैज्ञानिक निर्णयों से 21वीं सदी में धर्म और विज्ञान के साथ-साथ चलने की अनोखी राह खोली ।

किसे विश्वास होगा यह सुनकर कि दशकों पहले पोलैंड के कवि ज़ूलियस स्लोवैकी ने इस कविता के ज़रिये 1848 में एक खास पोप की कल्पना की थी...

"वो देखो, आ रहा है अनोखा पोप
जिसे है जन-जन का ख्याल
जो है सच में विश्वबंधु....."

और यह कल्पना 1978 में साकार हो गयी जब पोलैंड में जन्मा 'केरोल वॉजताइला' वैटिकन राष्ट्र का पहला गैर-इटालियन पोप बना और कहलाया पोप जॉन पॉल द्वितीय । केरोल को धर्मगुरू पद के लिए ईश्वर ने मानो स्वयं चुना था । बचपन में उससे मां छीन कर, किशोरावस्था में भाई और पिता को छीन कर, फिर पोलैंड में हिटलर को भेज कड़ाके की ठंड में केरोल से मज़दूरी करवा ईश्वर ने उसकी ख़ूब परीक्षा ली । अभाव, सत्यानिष्ठा, मृत्यु, अपूर्ण आकांक्षा और अकेलेपन का दर्द क्या होता है, इसका अहसास दिला ईश्वर ने मानो उसे पृथ्वी के समस्त मानवों से परिचित करा दिया । इन्हीं में वैज्ञानिक संप्रदाय भी था जिसकी सत्यनिष्ठा से जुड़ी पीड़ा-वेदना को पोप ने प्रखरता से महसूस किया, और गैलीलियो और डार्विन जैसे वैज्ञानिकों की उस पीड़ा को भोगा जो सेंट पीटर की गद्दी पर विराजमान उनके पूर्ववर्ती पोपों ने इन महान वैज्ञानिकों को पहुंचायी ।

चुनांचे, 1992 तथा फिर 1996 में पोप जॉन पॉल द्वितीय ने दो अपूर्व, ऐतिहासिक घोषणाएं कीं जो क्रम से गैलीलियो और डार्विन के संबंध में थी । पोप ने ऊंची आवाज़ में पूरी दुनिया के सामने कबूल किया कि बरसों-बरस पहले जो वैज्ञानिक सिद्धांत इन वैज्ञानिकों ने दिये थे, वे बहुत ही सही और सार्थक थे । मगर तब चर्च ने इन सिद्धांतों को समझने में बड़ी भूल की और चर्च के निर्णयों से इन वैज्ञानिकों को शारीरिक व मानसिक यंत्रणाएं झेलनी पड़ीं । पोप जॉन पॉल द्वितीय ने आगे कहा कि चर्च आज इस भूल को न सिर्फ़ महसूस करता है बल्कि खुलेआम स्वीकार भी करना चाहता है । इन घोषणाओं के बाद वैटिकन ने इन वैज्ञानिकों की आत्मा से बाकायदा क्षमा मांगी और प्रायश्चित के अन्य आयोजन भी किये । फिर इस आशय के पत्र "पॉन्टिफिकल एकाडेमी ऑफ़ साइन्सेज़" को भी भेजे गये ताकि इस प्रायश्चित की सनद रहे ।

1564 में इटली के पीसा शहर में जन्मा गैलीलियो गैलिली आज भौतिकशास्त्र का पिता माना जाता है । पेंडुलम संबंधी, तरल पदार्थों के बहाव, ठोसों के गुरुत्वाकर्षण केंद्रों, दूरबीन, इन्क्लाइंड प्लेन एक्सपेरीमेंट जैसे न जाने कितने-कितने सार्थक प्रयोग कर उसने कई बार अरस्तु के वक्तव्यों को गलत सिद्ध किया । फिर एक दिन दूरबीन व अन्य प्रयोगों से उसने सिद्ध किया कि पृथ्वी सहित सभी ग्रह सूर्य की परिक्रमा करते हैं । इसके विपरीत तब चर्च की मान्यता यह थी कि पृथ्वी ही इस ब्रह्मांड का केंद्र है जिसके गिर्द सभी ग्रह-उपग्रह घूमते हैं । गैलीलियो को चुनांचे ताकीद की गयी कि वह न ऊटपटांग प्रयोग करे, न ही ऊटपटांग बोले । मगर सत्यनिष्ठ गैलीलियो सत्य पर अड़ा रहा । उसने कहा कि कॉपरनिकस भी इसी नतीजे पर पहुंचा था, मगर चर्च ने उस पर मुकदमा चला उसे 70 वर्ष की उम्र में नज़रबंद करवा दिया । 1642 में मर कर ही गैलीलियो चर्चा के चंगुल से आज़ाद हो पाया ।

अंग्रेज वैज्ञानिक चार्ल्स डार्विन ने 22 वर्ष की उम्र में 5 वर्ष लंबी समुद्री यात्रा कर पर्यावरण के जीव-जगत को नज़दीकी से देखा परखा और दो पुस्तकें लिखीं "द ऑरिजिन ऑफ़ स्पीशीज़" तथा "डिसैंट ऑफ़ मैन" । इन पुस्तकों में वर्णित "विकासवाद", "प्राकृतिक वरण" तथा योग्यतम की अतिजीविता के सिद्धांतों के कारण वे बहुत प्रसिद्ध हो गये । "डिसेंट ऑफ़ मैन" में डार्विन ने कहा कि मनुष्य दरअसल कपि (बंदर, एप) से उत्पन्न होकर विकसित हुआ है । बस, यही बात चर्च को नागवार गुज़री क्योंकि वैटिकन के मुताबिक मनुष्य दैवीय शक्तियों से उत्पन्न हुआ । डार्विन के विचार लॉयल, हुकर, हेकेल तथा हक्सले जैसे चिंतकों को तो भाये परंतु चर्च को पसंद नहीं आये । फलस्वरूप अनेक देशों में रूढ़िवादी ईसाइयों और गिरजों

(कृपया शेष भाग पृष्ठ 44 पर देखें)

भा. प. अ. केंद्र से

1. निराक्रमक ब्लड प्रेशर मापक (NIBP) मॉड्यूल व पल्स ऑक्सीमीटर मापक (SpO_2) मॉड्यूल का तकनीकी हस्तांतरण

भा.प.अ. केंद्र के इलेक्ट्रॉनिकी प्रभाग ने इन दोनों इकाइयों के निर्माण की तकनीकी विकसित की है तथा एक समझौते के अंतर्गत, यह जानकारी, 4 अप्रैल 2005 को मे. लार्सन एंड टूबरो लि., मैसूर को दी गयी है ।

निराक्रमक रक्त दाब मापक इकाई नॉन-इनवेजिव ब्लड प्रेसर मॉड्यूल, प्रकुंचन (सिस्टोलिक), अनुशिथिलन (डायॉस्टोलिक) व औसत (मीन) रक्त दाबों को, दस मिनट के अंतराल के मध्यमान के रूप में दर्शाती है (अंतराल को बदला भी जा सकता है) । यह तकनीक रक्त दाब नापने की दोलनमिति (ऑसीलोमीट्रिक) विधि का इस्तेमाल करती है । इस मॉड्यूल में एक टूर्निकेट (tourniquet), एक दाब ट्रांसड्यूसर, एक हवा भरने वाला पंप और एक हवा निकालने वाला परिनालिक (सोलेनॉयड) वाल्व, इलेक्ट्रॉनिक पथ से जुड़े रहते हैं । इस यंत्र को उपलब्ध रोगी-मॉनीटरन यंत्र से जोड़कर या पृथक रूप से यंत्र की तरह प्रयोग कर सकते हैं । दूसरे प्रकार के इस्तेमाल में इसमें माइक्रो कंट्रोलर व कन्सोल (console) लगाया जा सकता है ।

ऑक्सीमीटर इकाई, रक्त में ऑक्सीजन की संतृप्ति-प्रतिशत (saturation pereentage) दर्शाती है । मापन की यह विधि, रक्त में उपस्थित ऑक्सीजन युक्त (oxygenated) व ऑक्सीजन विहिन (deoxygenated) हेमोग्लोबिन की सांद्रता से जुड़े प्रकाशीय (रक्त व अवरक्त-रेड एंड इन्फ्रारेड) अवशोषण गुण पर आधारित है । इसमें एक चिमटी (क्लिप) पर, रक्त व अवरक्त प्रकाश उत्सर्जक व एक प्रकाश संवेदक लगे होते हैं । चिमटी को अंगुली पर लगाकर पारगत (ट्रांसमिटेड) रक्र अवरक्त प्रकाश को मापा जा सकता है । संवेदक में उत्पन्न प्रकाश विद्युतधारा को रुधिर की ऑक्सीजन संतृप्ति-प्रतिशत में बदला जाता है । इसे भी, पहले वाले यंत्र की तरह, दोनों प्रकार से उपयोग में लाया जा सकता है ।

2. केला-सार निष्कर्षण-विधि

न्यूक्लियर एग्रीकल्चर व बायोटेक्नोलॉजी प्रभाग (NA & BT) व फूड टेक्नोलॉजी प्रभाग (FTD) द्वारा संयुक्त रूप से विकसित यह विधि केले से फल-सार निकालने व केले का पाउडर उपोप्ताद (बाय प्रोडक्ट) के रूप में प्राप्त करने से संबंधित है । देश में सब फलों की तुलना में केले का उत्पादन ज्यादा होता है । संसार में कुल केला उत्पादन का 20 प्रतिशत भारत में होता है । पकने के बाद इसकी अपेक्षाकृत कम शेल्फ आयु (shelf-life) व देश में अच्छी श्रेणी की वाहन/भंडारण व्यवस्था की कमी के कारण, इस उत्पादन का 35-40%, उपभोक्ता तक जाते-जाते नष्ट हो जाता है । इस बड़े नुकसान को कम करने का एक प्रभावी तरीका, फल के खराब होने से पहले ही उससे सार निकालकर परिरक्षित करना है । पर अभी तक ऐसी कोई, अच्छी व्यावसायिक विधि उपलब्ध नहीं है । केले में आर्द्रता बंधित रूप में होती है जबकि सेब व सीट्रस फलों में ऐसा नहीं है ।

भा.प.अ. केंद्र द्वारा विकसित विधि में केले के सार को अलग और निष्कर्षित करने में कई प्रक्रियाओं, जैसे संमिश्रण (ब्लेंडिंग), मंथन (चर्निंग), आटोक्लेवन और अपकेंद्रण (सेंट्रीफ्यूजिंग) का उपयोग किया जाता है । बिना कोई एंजाइम मिलाये, पारदर्शी सार की लब्धि (यील्ड) 55% (w/w) तक होती है । इसे सार को 4^0 से. से कम तापमान पर बिना कोई परिरक्षक मिलाये, शीत-भंडार में महीनों रखा जा सकता है । शेष गूदे की हिम-शुष्कन के बाद पिसाई कर उसे महीन केला-चूर्ण में बदल लेते हैं ।

इस प्रक्रिया की तकनीकी जानकारी मे. आई टे मैट्रिक्स कं. लिमिटेड (M/s. I Te MATRIX Co. Ltd.), बैंगकॉक (थाईलैंड) को 7 दिसंबर, 2004 को दी गयी ।

3. भा.प.अ. केंद्र द्वारा विकसित आर. एफ. (RF) इलेक्ट्रॉनिकी ऑस्ट्रेलिया पहुंची :

इलेक्ट्रॉनिकी प्रभाग द्वारा विकसित रेडियो आवृत्ति (RF) नियंत्रित करने वाली इलेक्ट्रॉनिकी, ऑस्ट्रेलियन नेशनल यूनिवर्सिटी (ANU), ऑस्ट्रेलिया में अप्रैल 2005 को स्थापित कर सफलता पूर्वक कार्यरत की गयी । इस कार्य में RF इलेक्ट्रॉनिकी का पूर्व परीक्षण, उच्च पॉवर प्रानुकूलन (कंडीशनिंग), सम-स्वरित करना (ट्यूनिंग), कला अभिबंधन (पेज लॉकिंग) और प्रत्येक कैविटी व पूरे LINAC का प्रचालन तथा 343 MeV वाली Ni-58 पुंज को न्यूक्लीय भौतिकी प्रयोगों के लिए प्राप्त करने का कार्य शामिल था ।

जुलाई 2005 में, कॉर्नेल युनिवर्सिटी में हुई RF सुपरकंडक्टिविटी कार्यशाला में, ANU द्वारा दी गयी रिपोर्ट के अनुसार भा. प. अ. केंद्र द्वारा प्रदत्त RF प्रणाली अति उच्च स्थिरता, प्रचालन की सरलता और उच्च विश्वसनीयता प्रदान करती है । जिससे LINAC सुविधा लगातार चलायी जाती है । पुंज प्राप्ति काल में अवशिष्ट एंपलीट्यूड और कला अशुद्धियां क्रमश 0.1 और 0.1 डिग्री से कम हैं ।

ऑ. ने. यू. ने उपलब्ध विभिन्न विकल्पों का सावधानी पूर्वक मूल्यांकन कर इस केंद्र द्वारा विकसित RF नियंत्रण इलेक्ट्रोनिकी को चुना था । कुल 28 मॉड्यूलों को उनकी पॉवर सप्लाई, बिनों (bins) और केबलिंग के साथ जनवरी 2005 में दिया गया था, जिसका दाम 64,000 अमरीकी डॉलर था ।

इलेक्ट्रॉनिकी प्रभाग इस तरह का कार्य पहले भी भा. प. अ. केंद्र टी आई एफ आर, व न्यूक्लियर सायंस सेंटर के त्वरकों के लिए कर चुका है ।

4. खाद्य पैकेज किरणक का नया रूप

1967 में, कैनेडा एटॉमिक एनर्जी लि. के सहयोग से फूड इर्रेडियेशन प्रॉसेसिंग फेसिलिटी (FIPLY) में खाद्य पैकेजों को किरणित करने के लिए किरणक लगाया गया था । विभिन्न अनुसंधान व विकास कार्यक्रमों में, इसका उपयोग केंद्र के वैज्ञानिक करते रहे हैं । पर पिछले कुछ समय से किरणक के संचालन में बार-बार कठिनाइयां आ रही थीं । आयातित कल-पुर्जों की उपलब्धता में कठिनाई के कारण खाद्य तकनीकी प्रभाग इसको ठीक नहीं चला पा रहा था । अत: सेंटर फॉर डिज़ाइन एंड मैन्यूफैक्चर से इस संयंत्र हेतु सलाह/मदद ली गयी। सी डी एम ने किरणक की सभी वैद्युत तथा वातीय (pneumatic) नियंत्रक प्रणालियों के अभिकल्पन व निर्माण का कार्य किया ।

वैद्युत नियंत्रण पटल निर्माण में, देश में निर्मित प्रसिद्ध घटकों (जैसे सीमेन्स लि. द्वारा बनाये) OEN निर्मित सुवर्ण लेपित कांटेक्ट वाली रिलों का इस्तेमाल किया । रेडियोलॉजिकल आपरेशनल सुरक्षा समिति की सहमति प्राप्त कर इस वैद्युत नियंत्रक पटल को FTD में लगाया गया । इसे बेहतर प्रचालन सुविधा की दृष्टि से नये स्थल पर लगाया गया, इससे सभी पूर्व विद्युत केबलों को नये केबलों से बदलने का कार्य भी सी डी एम ने किया । दो गामा एरिया मॉनीटरों को भी पटल पर लगाया गया । मॉनीटरों का निर्माण विकिरण मानक एवं सुरक्षा प्रभाग के रेडियेशन प्रोटेक्शन इंस्ट्रुमेंटेशन अनुभाग ने किया था ।

पहले की आयातित प्रणाली में, विकिरण स्रोत, एक पश्निालिक वाल्व के ठीक से कार्य न करने पर बिना किसी एलार्म/चेतावनी के प्रकट हो जाता था । अब यह असुरक्षित व खतरनाक स्थिति भी सी डी एम ने हटा दी है । पहले से ज्यादा सुरक्षा युक्त गुणों वाली एक नूतन वातीय नियंत्रक प्रणाली को अभिकल्पित कर, उसे मे. फैस्टोकंट्रोल (M/s. FESTO CONTROL), बैंगलोर से निर्मित करा कर लगाया गया है ।

इन सभी परिवर्तनों के कारण, इससे रख-रखाव हेतु सभी पुर्जे देश में उपलब्ध हैं, व रख-रखाव की पूरी जानकारी भी प्राप्त है । साथ ही सभी बदलाव कम खर्चे में हुए हैं तथा प्रणाली नियमित रूप से शत-प्रतिशत उपलब्धता से कार्य कर रही है ।

5. न्यूक्लीय रिएक्टरों के अनुप्रयोग हेतु इंटीग्रेटेड परिपथ विकसित :

भा.प.अ. केंद्र पहले ही, न्यूक्लीय पॉवर परियोजनाओं (NPP) व अन्य उच्च विश्वसनीय नियंत्रण अनुप्रयोगों के लिए आवश्यक हार्डवेयर बनाने में सफल रहा है । यह मानक हार्डवेयर मॉड्यूल अब ECBUS Board™ और ECPS™ (ट्रेड मार्क) के नाम से उत्पाद श्रेणी का अंग बन चुके हैं । न्यूक्लीय अनुप्रयोगों हेतु विश्वसनीय उत्पाद बनाने में 'अभिकल्पन-सरलता' का मुख्य हाथ है । नियंत्रक सिग्नल में, जब वे प्रणाली के एक भाग से दूसरे भाग में जाते हैं, संगति (consistency) बनाये रखने के लिए उत्पन्न पॉवर को छितराने (dissipation) के लिए उचित समय-अंतराल देना काफी महत्वपूर्ण है । जैसे-जैसे हम सिग्नल ठीक रखने में, आवश्यक आगत व निर्गत सिग्नल के गैलवेनिक अलगाव में बढ़ते हैं, I & C प्रणाली के दाम बढ़ते जाते हैं । साथ ही, प्रयुक्त मॉड्यूल एक ही स्रोत से प्राप्त हैं व महंगे हैं । अपनी अभिकल्पनाओं को, पिछले बारह रिएक्टरों में सफलता पूर्वक इस्तेमाल करने के बाद, रिएक्टर नियंत्रण प्रभाग ने, केंद्र में ही, इन आयातित इंटीग्रेटेड परिपथों को विकसित करने का निश्चय किया । इससे न केवल I & C की कुल लागत में कमी होगी (विदेशी मुद्रा तो बचेगी ही) पर साथ ही उनकी निष्पादन गुणवत्ता भी बढ़ेगी ।

अब तक प्रयुक्त अलगाव एंपलीफायर मॉडल में काफी कमियां थी, जिन्हें दामों के कारण सहना पड़ता था । आयातित मॉड्यूल में परिपथ की संस्थिति (टोपोलॉजी) निश्चित है । इसी के अनुसार एक संकर मोड्यूल विकसित व निर्मित किया गया । इसकी अभिकल्पना में कुछ परिवर्तन कर उनके निर्माण में उचित चुनिंदा घटकों (ठीक दाम व गुणवत्ता वाले) का उपयोग किया गया । तब भी उत्पादन लागत आयातित दामों की अपेक्षा कम पड़ी । NPP अनुप्रयोगों में, इनकी निष्पादिता व उचित अनुकूलता जांचने हेतु विस्तृत अध्ययन किये गये ।

पहले इस्तेमाल किये जाने वाले क्लाक-ड्राइवर की सप्लाई वोल्टेज रेटिंग काफी कम थी । इससे वोल्टता-सर्ज के कारण कई बार वह कार्य करने में अक्षम हो जाती थी - अब यहां विकसित क्लाक-ड्राइवर में वोल्टता-क्षमता को 20 V तक बढ़ा दिया गया है जबकि सामान्य सप्लाई 15 V है । 4-20 mA वाला अलगाव करेंट ट्रांसमीटर मॉड्यूल भी, इसी प्रकार से विकसित किया गया है ।

जब ई. सी. आई. एल. इन मॉड्यूलों का निर्माण व्यावसायिक स्तर पर करने लगेगी तो चल रहे NPP में बदलने व नये NPP में लगने वाले मॉड्यूलों की आवश्यकता कम लागत पर पूरी होगी, जिससे विदेशी मुद्रा की बचत के साथ-साथ इस पर विदेशी ताकतों द्वारा रोक लगाने से भी छुटकारा मिलेगा ।

प्रस्तुति : **डॉ. कैलाश चंद्र भल्ला**
B-12, गीतांजली, प्लॉट नं. 12, सेक्टर-17,
वाशी, नवी मुंबई 400 705.

1. बसंत-ग्रीष्म ऋतु में बुआई के लिए गर्मी के प्रति सहिष्णु कपास की एक नयी किस्म का विकास :

भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नयी दिल्ली के वैज्ञानिकों को ताप के प्रति सहिष्णु कपास (गासीपियम हिर्सुटम) का एक आशाजनक जीन प्रारूप जिसे 'पूसा 17-52-10' नाम दिया गया है, का विकास करने में सफलता प्राप्त हुई है जिसका मूल्यांकन वसंत-ग्रीष्म 2002-2003 फसल के दौरान कृषि अनुसंधान केंद्र, श्रीगंगा नगर में विकसित कपास की अगेती किस्म आर. एस. 875 के साथ किया गया। 'पूसा 17-52-10' किस्म, 'आर. एस. 875' किस्म की तुलना में शीघ्र तैयार हो जाती है। 'आर. एस. 875' किस्म के प्राप्त 217.4 किग्रा./हे. बिनौलों की तुलना में 'पूसा 17-52-10' किस्म से औसतन 662.3 किग्रा./हे. बिनौले प्राप्त हुए। रेशे की गुणवत्ता के मामले में भी 'पूसा 17-52-10' किस्म के रेशे 'आर. एस. 875' किस्म के रेशों से बेहतर पाये गये।

2. नाशी जीवनाशकों के आकलन हेतु एक नयी विधि का विकास :

अभी तक नाशी जीवनाशक अपशिष्ट विश्लेषण मुख्यतः एकल सक्रिय संघटक या इसके अपघटन/उत्परिवर्तित उत्पादों के विश्लेषण तक ही सीमित था। हाल ही में एक से अधिक सक्रिय घटकों से युक्त पर्यावरणीय नमूनों की निगरानी के बढ़ते हुए महत्व की दृष्टि से विविध प्रकार के नाशी जीव अपशिष्टों का विश्लेषण महत्वपूर्ण हो गया है। भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नयी दिल्ली के वैज्ञानिकों द्वारा एक नयी बहुअपशिष्ट पद्धति का विकास किया गया है जिसमें जीएलसी-ईसीडी का प्रयोग करते हुए 34 नाशीजीवनाशकों का एक मात्रात्मक निर्धारण किया जा सकता है, वे इस प्रकार हैं : ऑर्गेनोक्लोरींस (α-एचसीएच, β-एचसीएच, γ–एचसीएच, δ–एचसीएच हेप्टाक्लोर, एल्ड्रिन, O,P'-डीडीई, एन्डोसल्फान A,PP' डीडीई, एन्डोसल्फान-B, O,P'-डीडीटी, एन्डोसल्फान सल्फेट, PP-डीडीटी, O,P-डीडीटी, डीडीटी और डाइकोफोल), सिन्थेटिक पाइरीथ्राइडस (साइक्लूथ्रिन, एल्फामेथ्रिन, साइपरमेथ्रिन, फेन्वेलरेट, डेल्टामेथ्रिन, फ्लूवेलिनेट, फेन्पोपार्थिन, परमेथ्रिन और लम्बेडा साइहेलोथ्रिन); ऑर्गेनोफास्फोरस कीटनाशी (क्लोरोपाइरोफास-मिथाइल, क्लोरोपाइरोफास, क्विनेलफास, फोरेट); शाकनाशी (ब्यूटाक्लोर, एट्राजीन) और क्लोरोथेलोनील।

3. चावल की जैविक खेती के लाभदायक परिणाम :

भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नयी दिल्ली के वैज्ञानिकों द्वारा चावल की जैविक खेती हेतु किये गये विभिन्न परीक्षणों से यह ज्ञात हुआ है कि 10 टन प्रति हैक्टर गोबर की खाद खेत में डालने से चावल की पैदावार में 0.5 टन/हैक्टर, हेड राइस रिकवरी में 1.7 प्रतिशत, दाने की लंबाई-चौड़ाई के अनुपात में 0.16, मृदा जैव कार्बन में 0.09 प्रतिशत, मिट्टी में उपलब्ध नाइट्रोजन में 8.6 किग्रा./हेक्टर, मिट्टी में उपलब्ध फास्फोरस की मात्रा में 5.0 किग्रा./हेक्टर तथा मिट्टी में उपलब्ध पोटाश में 11.2 किग्रा. प्रति हैक्टर की बढ़ोत्तरी होती है। इसी प्रकार हरी खाद (सेस्बानिया) के उपयोग से नियंत्रित खेत की तुलना में, पैदावार में 1.0 टन/हैक्टर, हेड राइस रिकवरी में 1.4 प्रतिशत, दाने की लंबाई में 0.8 मिमी. दाने की लंबाई,-चौड़ाई के अनुपात में 0.11, मृदा जैविक कार्बन में 0.09 प्रतिशत, नाइट्रोजन में 16.4 किग्रा./हैक्टर की बढ़ोत्तरी पायी गयी। लेकिन गोबर की खाद, सेस्बानिया हरी खाद एवं नीली हरी शैवाल के मिश्रण का एक साथ उपयोग करने पर अधिकतम पैदावार प्राप्त हुई। वैज्ञानिकों द्वारा किये गये इस शोध का यह परिणाम निकला कि चावल की सही उपज लेने, दाने की गुणवत्ता में सुधार लाने एवं मृदा उर्वरता बढ़ाने के लिए चावल की जैविक खेती की जा सकती है।

4. सर्वाईकल कैंसर से बचाय फॉलिक अम्ल :

वैज्ञानिकों द्वारा किये गये एक शोध के अनुसार जिन व्यक्तियों की लाल रक्त कोशिकाओं में फॉलिक अम्ल की पर्याप्त मात्रा मौजूद रहती है उन्हें अन्य व्यक्तियों की तुलना में कैंसर होने की संभावना काफी कम होती है। 'कैंसर की समस्या में फॉलिक अम्ल का प्रभाव' विषयक एक शोध में यह पाया गया कि जिन व्यक्तियों की लाल रक्त कोशिकाओं में फॉलिक अम्ल की मात्रा सामान्य से कम पायी गयी, उनमें अन्य व्यक्तियों की तुलना में सर्वाइकल कैंसर होने की आशंका पांच प्रतिशत अधिक होती है। सामान्यतः प्रत्येक व्यक्ति को आमतौर पर प्रतिदिन 400 माइक्रोग्राम फॉलिक अम्ल की आवश्यकता पड़ता है। यदि शरीर में फॉलिक अम्ल की वांछित मात्रा में कमी आती है तो शरीर को दोहरी समस्या का सामना करना पड़ता है। फॉलिक अम्ल की कमी से एक तरफ जहां लाल रक्त कोशिकाएं कमजोर होने लगती हैं वहीं दूसरी ओर गुणसूत्रों के उनके कमजोर बिंदुओं से टूटने की संभावनाएं बढ़ जाती हैं जिसके परिणाम स्वरूप सर्वाइकल कैंसर उत्पन्न करने वाले विषाणुओं को इन टूटे हिस्सों से कोशिका के जैविक भाग में पहुंचना आसान हो जाता है। ये विषाणु कोशिकाओं में पहुंच कर ऐसे रासायनिक एवं जैविक परिवर्तन शुरू कर देते हैं जो आगे चलकर कैंसर उत्पन्न होने के कारक बन जाते हैं।

फॉलिक अम्ल से भरपूर भोजन सर्वाइकल कैंसर से शरीर को बचाने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। प्रतिदिन पर्याप्त

मात्रा में ऐसी हरी सब्जियां जिनमें फॉलिक अम्ल की पर्याप्त मात्रा हो, का ग्रहण सर्वाइकल कैंसर उत्पन्न करने वाले विषाणुओं की वृद्धि को रोक पाने में अत्यधिक सक्षम पाया गया है। इन सब्जियों के अलावा पर्याप्त मात्रा में फूल गोभी खाने से शरीर के लिए आवश्यक फॉलिक अम्ल की मात्रा शरीर को प्राप्त हो सकती है। फॉलिक अम्ल का सबसे अच्छा स्रोत तरबूज है। तरबूज बिना पकाये (आग पर) खाया जाता है इसलिए शरीर को अत्यधिक मात्रा में फॉलिक अम्ल प्राप्त होता है। इसी के साथ-साथ पर्याप्त मात्रा में पके लाल टमाटर खाने से भी सर्वाइकल कैंसर से बचा जा सकता है। वैज्ञानिकों के अनुसार जिन व्यक्तियों के रक्त में पर्याप्त मात्रा में लाइकोपीन मौजूद होती है, उनमें भी सर्वाइकल कैंसर होने की संभावना अन्य व्यक्तियों की तुलना में पांच गुना कम होती है। पके लाल टमाटर लाइकोपीन का सबसे अच्छा स्रोत होते हैं।

5. फेफड़ों के लिए खतरनाक है मोमबत्ती का धुआं :

अभी तक सिगरेट और बीड़ी के धुएं को फेफड़ों के लिए सबसे खतरनाक माना जाता रहा है परंतु हाल ही में किये गये एक वैज्ञानिक अध्ययन के अनुसार मोमबत्ती और धूप बत्तियों के धुएं से भी हमारे फेफड़ों को अत्यधिक नुकसान पहुंचने की संभावना होती है।

नीदरलैंड स्थित मास्टिच विश्वविद्यालय के वैज्ञानिक थियो डी कुक एवं उनके सहयोगियों द्वारा किये गये एक अध्ययन से यह बात सामने आयी है कि चर्च की जलती हुई मोमबत्तियों से सजाये जाने के कारण चर्च की हवा में कैंसर के लिए जिम्मेदार पॉली साइकिलिक हाइड्रोकार्बन की मात्रा अत्यधिक बढ़ जाती है। यह मात्रा सामान्य दिनों की तुलना में क्रिसमस के समय 20 गुना तक अधिक बढ़ जाती है क्योंकि तब चर्च में दिन भर मोमबत्तियां और धूपबत्तियां जला करती हैं और इस कारण क्रिसमस का समय फेफड़ों के लिए अधिक खतरनाक हो जाता है। उक्त शोध दल ने इन तथ्यों का पुनः परीक्षण एवं सत्यापन करने के लिए एक छोटे चर्च और एक बड़े चर्च में लंबे समय तक मोमबत्तियां और धूपबत्तियां जलायीं और एक निश्चित समय बाद चर्च के भीतर वायु में पायी जाने वाली कणिकाओं के संघनन का मूल्यांकन किया। इस संघनित वायु में काजल, धातुओं तथा विभिन्न कारसिनोजनिक जहरीले रसायनों की कणिकाएं मौजूद पायी गयीं। ये कणिकाएं इस धुआँ युक्त वातावरण में रहने वाले व्यक्तियों के फेफड़ों को काफी भीतर तक भेद सकती हैं और उसे अत्यधिक हानि पहुंच सकती है।

6. जानलेवा हो सकता है पके फल खाना :

अभी तक हम सभी यही जानते और मानते आये हैं कि फल खाना स्वास्थ्य के लिए लाभप्रद है और चिकित्सक भी अच्छे स्वास्थ्य के लिए सभी व्यक्तियों को फल खाने की सलाह देते है। भारतीय परंपरा में तो व्रत के दिनों में लोग अधिकांशतः फलाहार ही करते हैं। परंतु ठहरिए ! पके फल खाना अब आपके स्वास्थ्य के लिए हानिकारक हो सकता है और आप गंभीर रोगों की चपेट में आ सकते हैं। फल खाना स्वास्थ्य के लिए लाभप्रद है लेकिन केवल वे फल जो प्राकृतिक रूप से पकते हैं, ऐसे फल नहीं जो विभिन्न रसायनों की सहायता से पका कर बाजार में बेचे जाते हैं। दुर्भाग्य से आजकल बाजारों में रसायनों द्वारा पकाये गये फलों की ही भरमार रहती है। फल व्यवसायी, चाहे वे फल उगाने वाले कृषक हों या इन्हें बेचने वाले दूकानदार हों, सभी फलों को पकाने के लिए विभिन्न हानिप्रद रसायनों का धड़ल्ले से उपयोग कर रहे हैं। फलों को पकाने वाले इन रसायनों में 'क्रिपोन' नामक रसायन प्रमुख है जिसका उपयोग फल पकाने में वृहद स्तर पर किया जाता है। इस रसायन द्वारा पकाये जाने वाले फलों में हरा केला, पपीता, आम एवं संतरा आदि प्रमुख हैं। क्रिपोन में क्रियाशील रसायन के रूप में 30 प्रतिशत इथेफोन तथा 61 प्रतिशत अन्य तत्त्व होते है।

हरे केले, हरे पपीते, हरे आम एवं अन्य हरे फलों को समय से पहले पका जैसा पीला बनाने के लिए इन फलों को क्रिपोन के जलीय घोल में डुबोकर रख दिया जाता है जिसके उपरांत फल कुछ ही देर में पीला पड़ जाता है। नवरात्रि के दिनों में लेखक द्वारा किये गये एक सर्वेक्षण में इस प्रकार के पके केले खाने से लोगों को पेट से संबंधित विभिन्न रोग, शरीर में दर्द, शरीर फूलना, सांस लेने में कठिनाई होना जैसे अनेक रोग होने की जानकारी प्राप्त हुई है। कुछ व्यक्तियों को नवरात्रि के व्रत के दिनों में लगातार नौ दिनों तक क्रिपोन रसायन से उपचारित पके केले (पीले केले) खाने से फाइलेरिया जैसे लक्षण उत्पन्न होने के भी प्रमाण मिले हैं।

7. मूंगफली का नियमित सेवन बचाये कैंसर एवं हृदय रोगों से :

यूं तो मूंगफली को गरीबों का बादाम कहा जाता है और प्रायः ही मूंगफली खाना खाली समय बिताने या गप्पें मारने का एक अच्छा तरीका माना जाता है। परंतु फ्लोरिडा विश्वविद्यालय के शोध विज्ञानी स्टीव टैलकोट के अनुसार मूंगफली खाने से शरीर में मौजूद कुछ ऐसी कोशिकाओं के क्षयीकरण की प्रक्रिया रुकती है जिनको हानि पहुंचने से कैंसर तथा हृदय रोगों के होने की संभावना बढ़ जाती है। मूंगफली में प्रोटीन और कुछ अच्छी किस्म की वसा पायी जाती है और मूंगफली को भूनने से ये तत्त्व 22 प्रतिशत तक बढ़ जाते हैं जिनके कारण कैंसर और हृदय रोगों के होने की संभावनाएं काफी कम हो जाती हैं।

8. टमाटर का नियमित उपभोग कर कैंसर से बचें :

लाल-लाल गूदेदार पके टमाटरों के स्वाद से भला कौन भारतीय अनभिज्ञ होगा । अमीर से लेकर गरीब तक हर औसत भारतीय के भोजन में टमाटरों को विभिन्न रूपों में उपयोग में लाया जाता है । पके टमाटरों में मौजूद लाइकोपीन के कारण टमाटरों के नियमित उपभोग से कई प्रकार के कैंसर से बचा जा सकता है । उत्तरी इंग्लैंड स्थित कील विश्वविद्यालय में रसायन विभाग के अध्यक्ष प्रोफेसर जार्ज ट्रस्कॉट एवं बर्लिन स्थित हम्बोल्ट विश्वविद्यालय के वैज्ञानिक डॉ. फ्रिटज भॉम के द्वारा संयुक्त रूप से किये गये एक शोध के अनुसार टमाटर को लाल रंग प्रदान करने वाले रसायन लाइकोपीन हमारे शरीर की कोशिकाओं को वातावरण में मौजूद विभिन्न प्रकार के धुओं (यथा वाहनों का धुआं या बीड़ी-सिगरेट आदि का धुआं) से उत्पन्न नाइट्रोजन डाईक्साइड के दुष्प्रभावों से बचाता है । ज्ञातव्य है कि पूर्व में किये गये अनेक शोधों से यह प्रमाणित हो चुका है कि नाइट्रोजन डाईक्साइड मानव शरीर की कोशिकाओं को कैंसरग्रस्त कर सकती है ।

लाइकोपीन, कैरिटोनायडस नामक रसायनों के समूह का एक सदस्य है और मानव शरीर पर इसका अच्छा प्रभाव पड़ता है । इस समूह का सबसे जाना-पहचाना रसायन बीटा-कैरोटीन है जो गाजर एवं ब्रोकली आदि में प्रचुरता से पाया जाता है । बीटा-कैरोटीन पर किये गये अनेक शोधों से यह तथ्य सामने आया है कि ये रसायन शरीर में पहुंचने वाले अनेक हानिकारक रसायनों के दुष्प्रभाव से मानव शरीर की कोशिकाओं की रक्षा करते हैं और उन्हें क्षतिग्रस्त होने से बचाते हैं । इसी के साथ-साथ बीटा-कैरोटीन के नियमित उपभोग से बड़ी आंत और मूत्राशय के कैंसर होने की संभावनाएं भी कम हो जाती हैं ।

प्रोफेसर ट्रस्कॉट और डॉ. फ्रिट्ज ने अपने शोध कार्यों द्वारा यह प्रमाणित किया है कि कैंसर की रोकथाम में बीटा-कैरोटीन की तुलना में लाइकोपीन तीन से चार गुना अधिक प्रभावी होता है । प्रोफेसर ट्रस्कॉट के अनुसार धूम्रपान और वायु प्रदूषण के कारण जिन लोगों को कैंसर होने की संभावनाएं अधिक होती हैं उन्हें अपने दैनिक भोजन में टमाटर या उसके रस का सेवन अधिक करना चाहिए, परंतु साथ ही उन्होंने यह भी इंगित किया कि अत्यधिक मात्रा में टमाटरों का सेवन त्वचा को थोड़ा सांवला भी बना सकता है । एक अन्य शोध के अनुसार टमाटर या उसके गाढ़े जूस के नियमित सेवन से त्वचा में सनबर्न होने की संभावनाएं भी कम हो जाती हैं परंतु इस हेतु प्रतिदिन लगभग दो चम्मच टमाटर के गाढ़े रस का सेवन आवश्यक है ।

संकलन : **डॉ. राज किशोर**
डॉ. राम मनोहर लोहिया अवध विश्वविद्यालय,
फैजाबाद 242001

आईंस्टीन मेरे सपने में आये.....

उस रात आईंस्टीन की पहली पत्नी मिलेवा और उसकी सास के दैनिक झगड़ों के बारे में पढ़ते-पढ़ते मैं अचानक सो गया, तो सपने में साक्षात आईंस्टीन आ पधारे । मैंने हाल-चाल पूछा तो बोले- "देवकीनंदन जी, वो सास बहू यहां भी झगड़ रही हैं । पर आप लोगों ने भी मुझे कम परेशान नहीं किया । निन्यानवे के चक्कर में डाल दिया है !" मैंने हैरत से उन्हें देखा तो कहने लगे- "अरे भई, परमाणु संख्या 99 के तत्व को आईंस्टीनियम" नाम दे दिया है, अब पता नहीं कि आप लोगों ने यह तत्त्व बनाया भी है या नहीं ? इसीलिए परेशान हूं !"

इस बीच मेरी नज़र उनके बालों पर जा टिकी । पूछ ही लिया - "क्या आपकी कंघी खो गयी है ? तो बोले - "देवकीनंदन जी, दरअसल कंघी मैंने कभी भी इस्तेमाल नहीं की तो खोने का सवाल ही कहां आता है ? अलबत्ता एक बार एक यूरेनियम परमाणु तोड़ने के लिए मिलेवा से उसकी कंघी मांगी ज़रूर थी पर फौरन ही लौटा दी थी !"

उन्हें कुछ काम याद आया तो अचानक जाने लगे । मैंने कहा - "एक आखिरी सवाल । ये आपकी लोकप्रिय थ्योरी ऑफ रिलेटिव....??" तो बीच में टोक कर कहने लगे - "देवकीनंदन जी, किसके यहां रिलेटिव नहीं आते ? मेहमानों-रिश्तेदारों से तो हर कोई परेशान है । इसी कारण मेरी रिलेटिविटी थ्योरी बहुत लोकप्रिय हुई है !"

जाते-जाते कहने लगे - "लो अब भूल भी गया कि मुझे कहां जाना है और क्यों जाना है !!"

डॉ. देवकीनंदन
ए-304-बी, हृषीकेश, लोखंडवाला कॉम्प्लेक्स,
अंधेरी (प.), मुंबई 400 053

कुछ जानकारियां

1. बच्चों में बढ़ता मोटापा

खान-पान की गलत आदतों और निष्क्रिय जीवन शैली के कारण आज बच्चों में न केवल मोटापा बढ़ रहा है, बल्कि वे ऐसी बीमारियों की चपेट में आ रहे हैं, जिनके शिकार सामान्यतः वयस्क लोग होते हैं, विशेष बात तो यह है कि न तो बच्चों को ठीक पता होता है कि अच्छी सेहत के लिए वे क्या करें, न ही माता-पिता को इस संबंध में समुचित जानकारी होती है ।

बढ़ते मामले : न्यूट्रीशन फाउंडेशन ऑफ इंडिया ने इस संबंध में दिल्ली के मध्य और उच्च मध्य वर्ग के 4,300 बच्चों का परीक्षण किया । रिपोर्ट के अनुसार 26 प्रतिशत बच्चों का वजन सामान्य से अधिक था और 3.9 प्रतिशत बच्चों को मोटापा था । आल इंडिया इंस्टीट्यूट ऑफ मेडिकल सांइसेस, दिल्ली ने चेतावनी दी है कि मोटापे से होने वाले हृदय-विकार, मधुमेह जैसे रोगों से मृत्यु-दर, विशेषतः युवावस्था में, वर्तमान की दर 9 प्रतिशत से बढ़कर 33 प्रतिशत जा सकती है ।

मेरठ, उत्तर प्रदेश के सुभारती मेडिकल कॉलेज द्वारा आयोजित अध्ययन के अनुसार 1,500 विद्यार्थियों में से 9 प्रतिशत विद्यार्थी मोटापाग्रस्त थे । मुंबई में कॉलेज ऑफ होम साइंस द्वारा किये गये अध्ययन के अनुसार छात्राओं में 65 प्रतिशत ओवरवेट और मोटापे की समस्या पायी गयी ।

कारणों पर विचार : बाल-चिकित्सा से जुड़े डॉक्टरों का मानना है कि मोटापे के कारणों में बच्चों के बाह्य क्रियाकलापों में कमी, काफी देर तक टीवी देखना, असंतुलित भोजन और फेमिली हिस्ट्री के अलावा डिफेक्टिव जीन एक्शन (सिंड्रोम एक्स) शामिल है । कुछ डॉक्टर हारमानो के असंतुलन को भी जिम्मेदार ठहराते हैं, किंतु इसका प्रतिशत बहुत कम है । किंतु खान-पान के गलत तरीकों और आदतों को भी सभी प्रमुख कारण मानते हैं ।

आज बच्चे टीवी के सामने अपना अधिक समय गुजारते हैं । टीवी देखने के दौरान वे स्नैक्स का सेवन अधिक करते है । ये स्नैक्स सामान्यतः जंक-फूड होते हैं, जिनमें नमक और कैलोरी ज्यादा, किंतु रेशे कम होते हैं ।

बच्चों के स्कूल और ट्यूशन के समय के कारण भी वे सेहतमंद आहार नहीं ले पा रहे हैं । अधिकांश बच्चों को सुबह 6 बजे से 7 बजे के बीच ही घर से निकलना पड़ता है । सुबह की आपाधापी में वे न तो ठीक से नाश्ता कर पाते हैं न अपने साथ पौष्टिक/स्वास्थप्रद लंच रख पाते हैं । फलतः वे कैंटीनों में उपलब्ध जंक-फूड्स का सेवन करने लगते हैं ।

दिल्ली के सीताराम इंस्टीट्यूट की बाल चिकित्सक डॉ. राखी ठक्कर कहती हैं कि असंतुलित आहार और टीवी एवं कंप्यूटर की अत्यधिक लत के कारण 35 प्रतिशत स्कूली बच्चों में दृष्टि-दोष एवं 40 प्रतिशत बच्चों में दाँतों की समस्या भी आ रही है । जबकि मोटापा और मोटापा-जनित हृदयविकार, उच्च-रक्त चाप, मधुमेह, आर्थ्राइटिस जैसी वास्ताविक समस्याएँ तो बढ़ ही रही हैं ।

जागरुकता जरूरी है : जहाँ भारत में कुपोषण की समस्या दूर करने के लिए उपाय किये जा रहे हैं, वहीं अब बच्चों में बढ़ रहे मोटापे की ओर जागरुकता की आवश्यकता है - आनेवाली पीढ़ी को स्वस्थ और योग्य बनाने की जिम्मेदारी सभी की है । मोटे बच्चों को मनोवैज्ञानिक समस्याओं से भी जूझना पड़ता है । अपने सहयोगियों के बीच मोटापा उनके आत्मविशवास को कम करता है और वे अवसाद (डिप्रेशन) से ग्रस्त हो सकते हैं । विभिन्न अध्ययनों से यह ज्ञात हुआ है कि मोटे बच्चे सामान्य बच्चों जैसे खुश नहीं रहते हैं ।

चिकित्सकों का मानना है कि इस समस्या से निपटने के लिए स्कूलों और माता-पिताओं के सहयोग और प्रयास की जरुरत है । दिल्ली पब्लिक स्कूल, आर. के. पुरम की प्रधानाध्यापिका और शिक्षा शास्त्री श्यामा चोना कहती हैं कि बच्चों को स्कूल में ही स्वस्थ जीवन के विषय में शिक्षित और प्रशिक्षित करना चाहिए । बेहतर भोजन और शारीरिक कार्यकलाप से एवं टीवी की आदत को नियंत्रित करके इस दिशा में कारगर शुरुआात कर वांछित परिणाम हासिल किये जा सकते हैं ।

एक सफल प्रयोग : इस संबंध में सिंगापुर का उदाहरण उल्लेखनीय है । वहाँ सातवें दशक में बच्चों में मोटापा 2 प्रतिशत था, जो वर्ष 1992 तक बढ़कर 17 प्रतिशत हो गया था । ऐसे समय में वहाँ के हेल्थ प्रोमोशन बोर्ड ने जागरुकता का परिचय देते हुए समस्या से निपटने के लिए अभियान शुरु कर दिया । बोर्ड के इन्फॉरमेशन डिवीजन के निदेशक मेवल यैप द्वारा प्रसारित जानकारी के अनुसार उन्होंने स्कूलों में ध्यान केंद्रित करते हुए शिक्षकों को इस बात का प्रशिक्षण दिया कि वे बच्चों में खानपान के बेहतर तरीके विकसित करें । इसके अतिरिक्त वे स्कूल की कैंटीनों में उपलब्ध आहार में सुधार लाये एवं शारीरिक व्यायाम को जीवन शैली का एक अंग बनाये रखने के लिए बच्चों को उन्होंने प्रोत्साहित किया । इस अभियान का परिणाम यह था कि वहाँ वर्ष 1998 तक बच्चों में मोटापे की समस्या 10 प्रतिशत से भी कम के स्तर पर आ गयी ।

इससे पहले कि भारत में बच्चों के मोटापे की समस्या विकराल रूप धारण कर ले, यह आवश्यक है कि इसके

समाधान के लिए यहाँ भी समुचित अभियान शुरु किये जायें।

2. शरीर की प्रतिरोध शक्ति बढ़ाते हैं प्राकृतिक आहार

प्रकृति में ऐसे पौष्टिक आहार उपलब्ध हैं, जिनके सेवन से विभिन्न संक्रमणों और रोगों से लड़ने की शक्ति बढ़ती है। यदि शरीर की प्रतिरक्षा प्रणाली सुदृढ़ हो तो यह शरीर को बीमारियों से बचाता ही नहीं, बल्कि उसका उपचार भी करता है। शारीरिक प्रतिरोध क्षमता अच्छी होने से केश और त्वचा भी सुरक्षित और चमकदार रहते हैं।

यहाँ पर कुछ पौष्टिक प्राकृतिक आहारों के संबंध में जानकारी दी जा रही है, जिनके नियमित सेवन से शरीर की प्रतिरोध शक्ति बढ़ाकर आजीवन स्वस्थ रहा जा सकता है :-

सेब : सामान्य स्वास्थ्य और त्वचा के लिए यह टॉनिक का कार्य करता है। यह कब्ज दूर करता है। कोलेस्ट्रॉल कम करता है और शरीर से विषैले पदार्थों को हटाता है।

खीरा : यह मृदु विरेचक है। किडनी और ब्लैडर में पथरी बनाने वाले यूरिक एसिड का यह विलयन करता है। यह उच्च रक्त चाप को कम करता है। एस्ट्रिंजेंट होने के कारण यह त्वचा को चमकदार बनाता है और ठंडक पहुंचाता है।

तरबूज व खरबूजा : ये श्रेष्ठ क्लीन्जर हैं और शरीर में जल की मात्रा को बराबर बनाये रखने में सहायक हैं।

नाशपाती : यह मूत्रवर्धक है। विषैले पदार्थों को दूर करता है। थॉयरॉयड ग्रंथि के लिए लाभकारी है।

खूबानी (जरदालू) : यह मृदु विरेचक (लैक्जेटिव) है और एंटीऑक्सीडेंट है। यह शरीर से विषैले पदार्थों को दूर करता है।

संतरा : तुरंत ऊर्जा प्रदान करता है। क्लीन्जर का कार्य करता है और त्वचा को निखारता है।

चुकंदर : ये आँतों की बेहतरीन सफाई करता है। इसके सेवन से किडनी की पथरी दूर होती है। यह यकृत और पित्ताशय को विषैले पदार्थों से मुक्त करता है।

अजवाइन : यह कैंसर प्रतिरोधी है। उच्च रक्त चाप को कम करता है। जोड़ों के दर्द को कम करता है और कैल्शियम की परत जमने से रोकता है।

जौ : यह अल्सर के इलाज में उपयोगी है। कोलेस्ट्रॉल कम करता है। अच्छा हेअर टॉनिक है।

खजूर : रक्ताल्पता को दूर करने में मददगार है। फेफड़ों और श्वसन विकार में लाभकारी है।

चेरी : माइग्रेन और सिरदर्द को दूर करने में सहायक है।

गाजर : यह शरीर से विषैले पदार्थों को दूर रखती है। बालों और त्वचा के लिए लाभकारी है। किडनी की कार्यप्रणाली को यह ठीक रखती है और जीवाणु नाशक है।

मक्का : इसमें कैंसर प्रतिकारक गुण होता है। मस्तिष्क को इसकी आवश्यकता होती है और यह बालों के झड़ने को नियंत्रित करता है।

बादाम : यह प्रोटीन का अच्छा स्रोत है। कैंसर प्रतिरोधी है। कम वजन वाले व्यक्ति इसके सेवन से सामान्य वजन प्राप्त कर सकते हैं।

अंजीर : कैल्शियम का अच्छा स्रोत है। मृदु विरेचक है।

तिल : यह कैल्शियम का अच्छा स्रोत और एंटीऑक्सीडेंट है। यह हृदय को मजबूत रखता है और कोलेस्ट्रॉल कम करने में मदद करता है।

पार्स्ले : क्लींजिंग टॉनिक है। सांस को ताजा रखता है और किडनी की पथरी दूर करने में सहायक है।

पपीता : पाचन में मददगार है। पेट में वायु बनने से रोकता है। विषैले पदार्थों को दूर करता है।

दही : आंतों के लिए प्रशमनकारी है। त्वचा शोधक है। इसके एन्जाइम बालों का पोषण करते हैं।

मटर : इसमें प्रोटीन प्रचुर मात्रा में होता है। यह उदर और यकृत विकारों को दूर करने में सहायक है।

नींबू : एस्ट्रिजेंट और ब्लीचिंग एजेंट है। इसमें कैंसररोधी गुण होते हैं। पित्ताशय की पथरी हटाने में मदद करता है।

ग्रेप फ्रूट (चकोतरा) : जोड़ों का दर्द दूर करने में उपयोगी है। रक्त साफ करता है। इसमें एंटी-एलर्जिक गुण होते हैं।

आम : एसिडिटी कम करता है। वजन बढ़ाने में सहायक है।

काजू : शरीर को ऊर्जावान बनाता है। दांतों, मसूढ़ों और बालों के लिए उपयोगी है।

लहसुन : इसमें एंटीसेप्टिक गुण होते हैं। जीवाणुओं को नष्ट करता है। कोलेस्ट्रॉल कम करता है और श्वसन विकारों को दूर करने में लाभकारी है।

मूली : साइनस एवं गले के संक्रमण में उपयोगी है।

स्ट्रॉबेरी : रक्त को क्षारीय बनाता है और जोड़ों के दर्द को दूर करता है। यह रक्त भी साफ करता है।

शकरकंद : अल्सर की तकलीफ कम करता है, विषैले पदार्थों को दूर करता है।

नारियल : थॉयरॉइड ग्रंथि की कार्यप्रणाली को ठीक रखता है। इसके सार तत्त्व बालों और त्वचा का पोषण करते हैं।

अखरोट : मस्तिष्क के लिए लाभकारी है। उपापचय को ठीक रखता है।

पालक : कैंसर प्रतिरोधी है। रक्त चाप सामान्य करता है। रक्ताल्पता मिटाता है। शरीर की प्रतिरक्षा शक्ति बढ़ाता है।

कीवी फ्रूट : पाचन में सहायक है।

राजमा : कोलेस्ट्रॉल कम करता है, मधुमेह में लाभदायक है।

सोयाबीन : इसमें कैंसर प्रतिरोधी गुण होते हैं। यह कोलेस्ट्रॉल कम करता है।

ब्राउन राइस : यह उच्च ऊर्जा युक्त भोजन है और अशांत तंत्रिकाओं को ठीक करता है। बालों और त्वचा के लिए फायदेमंद है।

जई : यह कब्ज नहीं होने देता। एक्ने के नियंत्रण में सहायक है। इससे बालों का झड़ना रुकता है। एंटीऑक्सीडेंट गुणों से भरपूर है।

आलू : इसमें एंटीसेप्टिक गुण होते हैं। यह जली त्वचा और पिगमेंटेशन का उपचार करता है। मांसपेशियों को सुदृढ़ रखने में सहायक है।

पत्तागोभी : पाचक की गड़बड़ी को ठीक करता है। कैंसर प्रतिरोधी है और त्वचा-विकारों को दूर करता है।

भिंडी : आँतों के लिए प्रशमनकारी है। इससे पेट की वायु से छुटकारा मिलता है।

लेट्यूस : हड्डियों और बालों को मजबूत बनाता है।

लाल मिर्च : रक्त चाप सामान्य करता है और रक्त संचार को सुचारू बनाये रखता है।

आड़ू (पीच) : यह मूत्रवर्धक है और इसमें मृदु विरेचक का गुण होता है।

मशरूम : कोलेस्ट्रॉल कम करता है। इसमें कैंसररोधी गुण पाये जाते हैं।

3. बढ़ती उम्र में आँखों की देखभाल और आहार

अमरीका में हुए नये अनुसंधानों से ज्ञात हुआ है कि 65 वर्ष से अधिक आयु के व्यक्ति अपनी दृष्टि क्षमता में होने वाली हानि को रोक सकते हैं, यदि वे अधिक से अधिक ऐसे फलों और सब्जियों का सेवन करें जिनमें विशिष्ट विटामिन और खनिज मौजूद हों।

दरअसल, आँख के संवेदनशील हिस्से रेटिना में स्पष्ट दृष्टि के लिए जिम्मेदार धब्बेदार संरचना मैकुला का क्षतिग्रस्त होना दृष्टि में ह्रास का कारण होता है, जो सामान्यतः 60 वर्ष से अधिक आयु वर्ग के लोगों में दिखायी देता है। मैकुला का क्षतिग्रस्त या अपक्षयन आज एक बड़ी समस्या के रूप में उभर रहा है, क्योंकि लोगों की औसत आयु में वृद्धि हो रही है। हांलाकि, वैज्ञानिकों को मैकुला-अपक्षयन के कारणों का कोई ठोस जानकारी नहीं मिली है, किंतु कुपोषण को इसके लिए एक महत्वपूर्ण कारण माना जा रहा है।

वर्तमान अध्ययन इस बात का संकेत देते हैं कि विटामिन-सी, विटामीन-ई, और बीटा कैरोटिन का उचित मात्रा में सेवन यदि जिंक-ऑक्साइड के साथ किया जाये, तो आयु-जनित मैकुला-अपक्षयन और दृष्टि ह्रास को बढ़ने से रोका जा सकता है।

जॉन हॉपकिन्स मेडिकल इंस्टीट्यूट, अमरीका के खोजकर्ताओं ने 60 वर्ष की आयु के 30,000 लोगों का 5 वर्षों तक अध्ययन किया। इनमें से एक चौथाई व्यक्तियों में मैकुला-अपक्षयन हुआ। जिन व्यक्तियों में यह दृष्टि ह्रास नहीं हुआ, उन व्यक्तियों को उपयुक्त विटामिन और खनिज (जिन्हें एंटी-ऑक्सीडेंट भी कहा जाता है) से भरपूर पोषक आहार दिये गये थे। एंटी-ऑक्सीडेंट से युक्त आहार शरीर में ऑक्सीकरण के कारण ही शरीर की कोशिकाएं क्षतिग्रस्त होती हैं और बढ़ती उम्र का प्रभाव अधिक दिखायी देता है। अतः वैज्ञानिकों का सुझाव है कि दृष्टि ह्रास की रोकथाम के लिए ऐसे आहार का सेवन औचित्यपूर्ण है, जो फलों और हरी सब्जियों से परिपूर्ण हो। इसके अतिरिक्त, समय-समय पर नियमित रूप से आँखों की जाँच भी आवश्यक है।

दृष्टि ह्रास के संबंध में कुछ अन्य महत्वपूर्ण जानकारियाँ इस प्रकार हैं :-

मैकुला-अपक्षयन ड्राई (शुष्क) और वेट (नम) दो प्रकार के होते हैं। इनमें से ड्राई प्रकार के लिए कोई विशेष उपचार नहीं हैं, किंतु वेट प्रकार के लिए लेजर सर्जरी से उपचार की संभावना रहती है।

वेट प्रकार के मैकुला-अपक्षयन के लिए वर्तमान में सबसे विश्वसनीय फोटोडायनेमिक थैरेपी है। इसमें औषधि को ब्लड स्ट्रीम में इंजेक्शन द्वारा पहुंचाया जाता है और फिर लेजर उपचार किया जाता है।

आँखों के दृष्टि ह्रास को दूर करने या मैकुला-अपक्षयन को हटाने क संबंध में वैज्ञानिक मरीजों को भ्रांतिपूर्ण विज्ञापनों और झूठे दावों से दूर रहने की सलाह देते हैं। आजकल

पत्रिकाओं और इंटरनेट में ऐसे विज्ञापन मौजूद हैं, जो चमत्कारिक रूप से इलाज का दावा करते हैं, किंतु ऐसे इलाज वैज्ञानिक दृष्टि से न तो सुरक्षा की कसौटी पर खरे उतरते हैं और न ही लाभकारी होते हैं। हाँ ये महंगे जरूर होते हैं।

4. स्वास्थ्य के लिए लाभप्रद मसाले

नयी दिल्ली में आयोजित "नवम् एशियन कांग्रेस ऑफ न्यूट्रिशन" में देशभर के अनेक आहार वैज्ञानिकों ने भारतीय मसालों के आश्चर्यजनक गुणों की जानकारी देते हुए इनमें से कई मसालों को महिलाओं के लिए विशेषत: लाभकारी बताया है।

नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ न्यूट्रीशन, हैदराबाद की डॉ. कमला कृष्णास्वामी के अनुसार मसालों में अच्छी मात्रा में फाइटोकेमिकल्स होते हैं, जिनसे सामान्यत: लंबी बीमारियों और विशेषत: हृदय संबंधी व कैंसर जैसे रोगों के खतरे कम हो जाते हैं। नयी दिल्ली के प्रसिद्ध नेचुरोपैथ डॉ. नाथू सिंह अधिकारी के अनुसार कुछ मसाले महिलाओं के लिए, विशेषत: मासिक धर्म के दौरान, लाभकारी होते हैं। यदि दालचीनी और लौंग का सेवन मासिक धर्म से एक सप्ताह पहले किया जाये, तो ऐंठन से छुटकारा मिलता है। डॉ. अधिकारी ने यह भी जानकारी दी कि पुदीने में क्लोरीन और फ्लोरीन होता है और यदि इसका प्रयोग विटामिन-ई के साथ किया जाये तो यह रक्त-शुद्धिकरण में सहायक होता है एवं अपर्याप्त रजोधर्म में भी सुधार लाता है।

अजवाइन जैसे मसाले भी महिलाओं के स्वास्थ्य के लिए आवश्यक हैं। अजवाइन के प्रयोग से गर्भवती महिलाओं को भोजन के पाचन, भूख बढ़ाने, उदर-वायु को नियंत्रित करने और गर्भाशय को स्वस्थ रखने में मदद मिलती है। कुछ मसाले दुग्ध-स्रवण में सहायक होते हैं। जीरे के प्रयोग से भी माताओं की दुग्ध-स्रवण की क्षमता बढ़ती है। इसी तरह शोरबों या रसों के साथ पकाये गये मेथी दानों के प्रयोग से गर्भाशय को पुन: अपनी संकुचित अवस्था में आने में सहायता मिलती है।

दिल्ली के प्रख्यात यूनानी चिकित्सक हकीम हाशमी जानकारी देते हैं कि कुछ समुदायों द्वारा दालचीनी का प्रयोग प्राकृतिक संतति-निरोध (बर्थ कंट्रोल) के लिए किया जाता है। यदि शिशु-जन्म के बाद दालचीनी के एक टुकड़े का हर रात एक माह तक सेवन किया जाये, तो यह मासिक धर्म को विलंबित करता है और पुन: गर्भधारण को रोकता है। यह अपरोक्ष रूप से दुग्ध स्राव भी बढ़ाता है। हाशमी यह भी बताते हैं कि सरदर्द में यदि इलायची से बनी चाय ली जाये, तो यह बहुत फायदेमंद है।

मोटापाग्रस्त और रजोनिवृत्त महिलाएं, जिन्हें साइनस और श्वसन समस्या है, उनके लिए नयी दिल्ली की वजन-नियंत्रण परामर्शदाता डॉ. शिखा शर्मा के पास कुछ विश्वसनीय "दादी मां के नुस्खे" हैं। तुरंत इलाज के लिए वे काली मिर्च और पिपली को अदरक व लहसुन के पेस्ट के साथ सेवन की सिफारिश करती हैं। डॉ. शर्मा यह भी जानकारी देते हैं कि मासिक धर्म के पहले या इसके दौरान महिलाओं में जल-प्रतिधारण बढ़ने पर इस समस्या का निवारण मेथी के दानों के सेवन से किया जा सकता है, क्योंकि ये मूत्रवर्धक होते हैं। डॉ. शर्मा के अनुसार वजन घटाने में भी मिर्च उपयोगी है। तेज मिर्च में पाया जाने वाला कैप्साइसिन उपापचय की गति को बढ़ाता है, जिससे अधिक कैलोरी जलती है। डॉक्टर की सलाह है कि जो अपना वजन घटाना चाहते हैं, वे अपने भोजन के साथ तेज मिर्च के सॉस का प्रयोग करें। जो व्यक्ति कम वसा युक्त भोजन लेते हैं, उनके लिए भी मसाले उपयोगी हैं, क्योंकि वसा हटाने के बाद भोजन का स्वाद प्रभावित हो जाता है और मसाले के प्रयोग से उनका स्वाद बढ़ जाता है।

भारतीय मसाले दीर्घकालीन बीमारियों से मुकाबला करने में भी सहायक हैं। डॉ. कृष्णास्वामी ने जानकारी दी है कि मेथी और दालचीनी के प्रयोग से मधुमेह के रोगियों को लाभ मिलता है। मेथी के प्रयोग से भोजन के कोलेस्ट्रॉल का अवशोषण कम होता है, जिससे रक्त-शर्करा का स्तर कम होने में मदद मिलती है। वर्तमान अध्ययनों से यह भी ज्ञान हुआ है कि दालचीनी के प्रयोग से इंसुलिन की कार्यक्षमता को बढ़ाया जा सकता है, जिसका प्रयोग रक्त-शर्करा के स्तर को कम करने के लिए किया जाता है। वैज्ञानिकों का कहना है कि दालचीनी का न केवल स्वाद बढ़िया होता है, बल्कि यह भोजन को विषाक्त करने वाले बैक्टीरिया को भी नष्ट करता है।

वास्तव में प्रकृति में ऐसे मसाले उपलब्ध हैं, जो स्वास्थ्य रक्षा के लिए सदैव काम आ सकते हैं। भारत में मसालों का प्रयोग आरंभ से ही होता आ रहा है। ये किफायती होने के साथ-साथ देश के सभी क्षेत्रों के भोजन में स्वीकार्य भी हैं।

संकलन : **बालकृष्ण काबरा 'एतेश'**
11, सूर्या अपार्टमेंट, रिंग रोड,
राणाप्रताप नगर, नागपुर - 440 022.

एक विवेचन :

विज्ञान के प्रति घटती रुचि की बढ़ती समस्या

डॉ. दिनेश मणि, डी. एससी.

पूर्व संपादक "विज्ञान" मासिक पत्रिका, 47/29, जवाहर लाल नेहरू रोड, जॉर्ज टाउन, इलाहाबाद-211 002

इसे एक विडंबनापूर्ण स्थिति ही कहा जायेगा कि हमारे देश के विश्वविद्यालयों और महाविद्यालयों में जहां एक ओर विद्यार्थियों की निरंतर बढ़ती संख्या के दबाव के कारण विद्यार्थियों की भीड़ संभालना मुश्किल हो रहा है वहीं दूसरी ओर विज्ञान के इस युग में विज्ञान विषयों में विद्यार्थियों की घटती रुचि चौंकाने वाली है। इस समस्या पर दृष्टिपात करने पर पता चलता है कि अच्छे समर्पित और प्रेरक विज्ञान शिक्षकों का अभाव (विशेष रुप से ग्यारहवीं और बारहवीं कक्षा तक के स्तर के विद्यार्थियों के लिए) इस समस्या का प्रमुख कारण है। इस प्रकार प्रेरणाहीन शिक्षकों द्वारा शिक्षित विद्यार्थी जब विश्वविद्यालयों और महाविद्यालयों में प्रवेश के लिए आते हैं तो एक तो वे अपने साथ दोषपूर्ण शिक्षा-प्रणाली के संस्कार लेकर आते हैं और दूसरे वे कुशल विद्यार्थियों के संपर्क में आने के बाद हीनभावना से ग्रस्त हो जाते हैं। दूसरा कारण यह है कि विभिन्न राज्यों की शिक्षण संस्थाओं के बीच जो क्षेत्रीय असंतुलन है उसके कारण वे विद्यार्थी जो महंगी शिक्षा व्यवस्था में अर्थाभाव के कारण शामिल नहीं हो पाते हैं, वे विवश होकर अन्य विषयों में चले जाते हैं। विज्ञान में कम होती रुचि या घटते रुझान के कई कारण हैं जैसे - विज्ञान में रोजगार से मिलने वाली संतुष्टि घटती जा रही है विज्ञान से संबंधित नौकरियां अब मुख्यतः अध्ययन, अनुसंधान एवं शासकीय पदों तक ही सीमित रह गयी हैं। निजी क्षेत्रों में विज्ञान का अनुसंधान का कार्य लगभग नगण्य होने से यहां रोजगार की संभावना समाप्त हो गयी है। अन्य रोजगारों की तुलना में कम वेतन, शोध के लिए वित्तीय सहायता के कम अवसर तथा अधिक अध्ययन खर्च आदि भी इस क्षेत्र में रुचि घटा रहे हैं।

यह माना जा रहा है कि विज्ञान पढ़ने एवं पढ़ाने वालों का अब समाज में वह सम्मान भी नहीं रहा जो कुछ वर्षों पहले था। यह देखा गया है कि बहुत दूर की बात नहीं है, 1985 में नयी शिक्षा-नीति का जो विचार-पत्र तत्कालीन शिक्षा मंत्री कृष्णचंद पंत ने जारी किया था, उसमें कहा गया था - "भारत में इंजीनियरिंग में पीएच. डी. किये हुए 45 फीसदी लोग ऐसे कामों में लगे हैं, जिनका शोध और विकास से कोई वास्ता नहीं है। हमारे इंजीनियरिंग के प्रतिभावान छात्रों को ऐसी नौकरियों और काम का परिवेश नहीं मिल पाता। फलस्वरूप उनमें उपलब्धि की भावना की कमी और अपने काम के प्रति असंतोष पाया जाता है।" वह नीति वक्तव्य इसलिए तैयार किया गया था कि नयी शिक्षा नीति में कुछ ऐसा किया जायेगा जिससे विज्ञान की विभिन्न शाखाओं के प्रति छात्रों का आकर्षण बढ़े।

विज्ञान के मूलभूत विषयों में अनुसंधान और उच्च शिक्षा में गिरावट आयी है। प्रबंध शिक्षा और सूचना-प्रौद्योगिकी में आये उफान का नुकसान विज्ञान की कई शाखाओं ने भुगता, फलस्वरूप जहां अरसे पहले आठवीं पास करने के बाद छात्रों का रुचिकर विज्ञान वर्ग का होता था, अब ऐसा नहीं रहा। जिन छात्रों ने इंजीनियरिंग की पढ़ाई पर अपना और करदाताओं का भारी पैसा खर्च किया, उन लोगों ने भी इंजीनियरिंग के बजाय प्रशासनिक सेवाओं या फिर प्रबंध-शिक्षा को वरीयता दी क्योंकि अनुसंधान में वर्षों खप जाते हैं जबकि ये विषय रातों-रात मालामाल बनाते हैं।

पूरे देश में 3,46,000 व्यक्तियों को लिखित प्रश्न भेजकर सर्वेक्षण के बाद तैयार की गयी रिपोर्ट के आंकड़े चौंकाने वाले हैं। रिपोर्ट के अनुसार 63 प्रतिशत विज्ञान परास्नातक नौकरियां पाने से वंचित रह गये। इससे यह स्पष्ट है कि इन विद्यार्थियों को ऐसी शिक्षा नहीं मिल पायी थी, जैसी दूसरे विद्यार्थियों को उपलब्ध हो सकी थी। परास्नातक ही नहीं, शोध के स्तर पर भी स्थिति चिंतनीय ऐसी शिक्षा है। मानव संसाधन विकास मंत्रालय के अनुसार वैज्ञानिक शोध के क्षेत्र में भारत से चीन कहीं आगे है। चीन में जहां 1995-2003 के बीच पीएच. डी. शोधार्थियों की संख्या 8135 से बढ़कर 48740 हो गयी वहीं भारत में इसी दौरान 3000 से बढ़कर मात्र 5000 तक पहुंच सकी। इतना ही नहीं, 2004 में जहां चीन में 57378 शोधपत्र प्रकाशित हुए वहीं भारत में मात्र 23338 शोध पत्र ही प्रकाशित हुए। इस प्रकार यदि हम साधन संपन्न अमरीका जैसे देशों की बात न करके पड़ोसी चीन से ही तुलना करें तो हम विज्ञान के क्षेत्र में काफी पीछे हैं।

विज्ञान के मूलभूत विषयों में छात्र प्रवेश ले नहीं रहे हैं। इंजीनियरिंग में जाने वाले देश ही छोड़कर जा रहे हैं। लेकिन नये रुझान और चिंताजनक हैं। यहां इन तथ्यों पर गौर करें - वैज्ञानिक और औद्योगिक अनुसंधान परिषद (सीएसआईआर) ने इस साल 25 छात्रों के लिए श्यामाप्रसाद मुखर्जी छात्रवृत्ति

शुरु की थी लेकिन उसे सिर्फ चार काबिल छात्र मिले । केंद्र सरकार का विज्ञान और प्रौद्योगिकी विभाग इस साल स्वर्णजयंती छात्रवृत्ति नहीं दे सका क्योंकि उम्मीदवार ही नहीं मिले ।

कुछ लोगों का मानना है कि कई राज्यों में एकवृत्ति पाठ्यक्रम लागू होने से भी विज्ञान की पढ़ाई सीमित हो गयी है । ऐसे शिक्षक जो विज्ञान जैसे नीरस एवं जटिल विषय को रोचक एवं बोधगम्य शैली में पढ़ाते थे, उनकी कमी हो गयी है । वित्तीय संकट के कारण अनेक विद्यालयों, महाविद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों के लिए विज्ञान के मूलभूत विषयों को जारी रखना असंभव होता जा रहा है । शिक्षा के प्रति सरकारों का रवैया भी ज्यादातर उपेक्षापूर्ण रहता है । विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने नौंवी योजना में उच्च शिक्षा हेतु सरकार से 829 करोड़ रुपयों की मांग की थी, परंतु 351 करोड़ रुपये ही स्वीकृत किये गये । अनुदान का लगभग 80 प्रतिशत हिस्सा वेतन में एवं 10 प्रतिशत रख रखाव में ख़र्च होता है । विज्ञान विषय में अच्छी पाठ्य पुस्तकों का अभाव भी विषय के प्रति अरुचि पैदा होने का एक प्रमुख कारण है । वैज्ञानिक एवं विज्ञान लेखक डॉ. जयंत विष्णु नार्लीकर के अनुसार - पाठ्य-पुस्तकों में न केवल विज्ञान संबंधी रोचक तथ्यों का उल्लेख होना चाहिए वरन् विज्ञान के इतिहास का भी समावेश होना चाहिए । ताकि शिक्षकों एवं छात्र छात्राओं को प्रेरणा मिले । विज्ञान विषयों में भी छात्र-छात्राओं की प्रतिभा केवल उनके परीक्षा परिणामों से की जाती है जो उचित नहीं है । विज्ञान विषयों में मूल्यांकन पद्धति में ऐसा परिवर्तन जरुरी है जो प्रतिभाओं का सही आकलन कर पाये न कि उनकी रटने की क्षमता को जांचे । पिछले लगभग 20-25 वर्षों में विज्ञान के मूलभूत विषयों में कोई ऐसी खोज नहीं हुई है जो इसकी ओर आकर्षण पैदा कर सके । वर्तमान में केवल उन्हीं विषयों की ओर अधिक ध्यान दिया जा रहा है जो लाभप्रद हैं । विश्वविद्यालय अनुदान आयोग एवं संस्थानों द्वारा प्रदान की जाने वाली वित्तीय सहायता और फेलोशिप विज्ञान के मूल विषयों में कम है एवं प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में अधिक ।

वैसे तो विज्ञान में अनुसंधान की उपेक्षा तो लंबे समय से चल रही है लेकिन उदारीकरण के दौर में तो इसका कोई पुरसाहाल ही नहीं रहा । इस समय सकल राष्ट्रीय उत्पाद का महज 0.7 फीसदी अनुसंधान पर खर्च हो रहा है । यह राशि उन विकसित देशों के मुकाबले बहुत कम है जो आम तौर पर सकल राष्ट्रीय उत्पाद का 2 फीसदी से ज्यादा इस पर खर्च करते हैं और जिनका मुकाबला करने के लिए हम आईटी सुपरपावर बनने की डींगे हांकते हैं । 1990 में हमारे यहां भी यह प्रतिशत 0.85 था, लेकिन इसमें गिरावट आती गयी । इसके असर भी दिख रहे हैं । योजना आयोग ने 10वीं पंचवर्षीय योजना की तैयारियों के क्रम में विज्ञान प्रौद्योगिक पर जो स्टीयरिंग कमेटी बनायी थी, उसका कहना है कि पिछले एक दशक में विज्ञान में पीएच.डी. करने वालों की संख्या में तो 20 फीसदी का इजाफा हुआ है लेकिन बीते दो दशकों में शोधपत्रों की कुल तादाद हर साल 12 हजार के आस पास स्थिर रही । यह स्थिति तब है जब औसतन हर तीसरे दिन एक इंजीनियरिंग कॉलेज देश में कहीं न कहीं अस्तित्व में आता है । अगर यही हाल रहा तो इन कॉलेजों में अध्यापकों के लाले पड़ जायेंगे । अभी भी यह समस्या कम गंभीर नहीं है ।

वास्तव में मौजूदा दौर में विज्ञान के नीति निर्माताओं के सामने सबसे बड़ी चुनौती अकादमिक संस्थानों में उपेक्षित पड़ी वैज्ञानिक प्रतिभाओं, उद्योगों और सामरिक महत्व के प्रतिष्ठानों के बीच समन्वय बिठाने की है । लेकिन आजादी के बाद जहां सरकार का ध्यान महज कुछ आईआईटी पर केंद्रित रहा वहीं आमतौर पर विज्ञान मेधा को निखारने का काम उपेक्षित रहा । कहा जा सकता है कि सरकारी नीतियों के कारण ही विज्ञान और प्रौद्योगिकी का वह रुप सामने आया जो वैज्ञानिकों और समाज के बीच पायी जाने वाली खाई को और चौड़ा कर रहा है । ये वही नीतियां हैं जिनमें एड्स की दवाएं खोजने और उससे बचाव पर तो अरबों रुपये खर्च करती हैं, जो जरुरी भी है, लेकिन मलेरिया की परवाह नहीं करतीं । जो हर साल हजारों की संख्या में पशु चिकित्सा स्नातक तो पैदा करती है, लेकिन गांवों में पालतू पशुओं की चिकित्सा करने वाले नहीं मिलते ।

विज्ञान विषयों की ओर कम रुझान और शोध कार्य में आयी कमी के चलते देश के वैज्ञानिक एवं शिक्षाविद् शिक्षा प्रणाली में बदलाव लाने के लिए मजबूर हो गये हैं । सरकार के कई विभाग जो सीधे ही शिक्षा एवं अनुसंधान से जुड़े हैं वे भी इस स्थिति से काफी चिंतित हैं । विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग (डी.एस.टी.) के प्रो.वी.एस. राममूर्ति के अनुसार - "यदि विज्ञान की ओर रुझान न बढ़ाया गया तो एक दशक बाद अनुसंधान संस्थानों एवं प्रयोगशालाओं हेतु वैज्ञानिक नहीं मिलेंगे और शायद इन्हें बंद भी करना पड़े । विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के पूर्व अध्यक्ष डॉ. हरि गौतम का कहना है कि "विज्ञान के मूल विषय ही तो मुख्य स्रोत हैं । यदि वे ही सूख गये तो सूचना प्रौद्योगिकी एवं जैव प्रौद्योगिकी जैसे व्यावहारिक एवं रोजगारोन्मुखी विषय कैसे जीवित रह पायेंगे ।"

विशुद्ध विज्ञान ने आज के युग को प्रौद्योगिकी के युग में बदल दिया है - चाहे वह सूचना प्रौद्योगिकी हो या जैव-प्रौद्योगिकी । यदि ध्यानपूर्वक विश्लेषण किया जाये तो पता चलेगा कि पहली वैज्ञानिक क्रांति औद्योगिक क्रांति थी जो विशुद्ध ज्ञान का प्रौद्योगिकी में रुपांतरण था ।

आज देश का हर नागरिक विज्ञान तथा वैज्ञानिक शिक्षा का पक्षधर है और उनसे बड़ी बड़ी आशाएं लगाये हुए हैं । हमारे देश में वैज्ञानिक शिक्षा चाहे परतंत्रता काल की ही रही हो या स्वतंत्रता-प्राप्ति के बाद की, उससे जिज्ञासुओं ने नूतनतम ज्ञान अर्जित करके नयी-नयी खोजों के माध्यम से लोक कल्याण के सपनों को साकार किया है । स्पष्ट है कि वैज्ञानिक शिक्षा देश के नागरिकों को प्रबुद्ध बनाती है, उनके चिंतन को, उनके रहन

-सहन को परिमार्जित करने का अवसर प्रदान करती है और परिश्रम करने का गुरुमंत्र देती है । इस तरह वैज्ञानिक शिक्षा कार्य-संस्कृति को जन्म देती है ।

कुछ विद्वानों का यह भी मानना है कि ऐसी हालत में जहां एक पूरी पीढ़ी विज्ञान को बेहतर जिंदगी जीने का सहारा देने वाला विषय न समझ रही हो, तो नीति नियामकों को सावधान हो जाना चाहिए । इस प्रवृत्ति को रोकने के लिए एक सुझाव यह है कि विज्ञान से जुड़े विषयों में अपेक्षित मानदंडों के साथ उच्च शिक्षा हासिल करने वालों को पहले ही रोजगार की लिखित गारंटी दे दी जाय और वादा पूरा न होने पर न केवल फीस वापस की जाये, बल्कि इसमें व्यतीत किये गये समय का उचित हरजाना भी दिया जाये ।

प्रौद्योगिकी सूचना और पूर्वानुमान परिषद् (टाइफैक) ने ऐसे करीब एक हजार कॉलेजों और संस्थानों को अनेक अनुसंधान परियोजनाएं सौंपी हैं जिनके जरिये विज्ञान के लोकव्यापीकरण की कोशिश हो रही है । लुकी-छुपी वैज्ञानिक प्रतिभाओं को इन परियोजनाओं में अपने सैद्धांतिक ज्ञान को व्यावहारिक धरातल पर परखने का मौका मिलेगा ।

एक बार सर सी. वी. रामन ने अपने भाषण में कहा, "जब तक विशुद्ध विज्ञान के वास्तविक महत्व को मान्यता नहीं दी जाती और सभी प्रकार के ज्ञान की उन्नति में उसके मौलिक प्रभाव को नहीं समझा जाता और उस पर काम नहीं किया जाता, तब तक भारत किसी भी दिशा में प्रगति नहीं कर पायेगा और विश्व के राष्ट्रों के बीच अपना स्थान नहीं बना सकता । भारत की आर्थिक समस्याओं का केवल एक ही हल है और वह है - विज्ञान और अधिक विज्ञान और, एक बार पुनः और अधिक विज्ञान ।"

मानव संसाधन एवं विकास मंत्रालय ने शिक्षा के क्षेत्र में आवश्यक सुधार के प्रति एक महत्वपूर्ण निर्णय लिया है । विज्ञान के सभी विषयों यथा भौतिक विज्ञान, रसायन विज्ञान, भूगर्भ विज्ञान, गणित, पर्यावरण विज्ञान जैसी विज्ञान की शाखाओं को अंतर्विषयी बनाने पर बल दिया है । पश्चिम के देशों के विद्यार्थियों को पर्यावरण विज्ञान लेकर पढ़ने की अनुमति होनी चाहिए और पर्यावरण विज्ञान के साथ विद्यार्थी को भौतिक विज्ञान पढ़ने की सुविधा होनी चाहिए ।

इसमें विद्यार्थी के स्वतंत्र कार्य पर बल देकर उसकी गुप्त योग्यताओं को विकास का अवसर मिलता है । आधुनिक शिक्षा का महत्वपूर्ण सिद्धांत "लर्निंग बाइ डूइंग" है और वह इसी प्रयोगशाला विधि द्वारा प्राप्त होता है । स्वयं प्रयोग करना विद्यार्थियों की रुचि के अनुसार भी है । इसलिए यह विधि मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण के भी अनुकूल है । यदि प्रयोग शिक्षक की देखरेख में नियोजित, निर्देशित और नियंत्रित हों तो निर्दिष्ट उद्देश्य प्राप्त होने की अधिक संभावना है ।

विज्ञान-शिक्षा का मूल उद्देश्य वैज्ञानिक मनोवृत्ति तथा अभिरुचि उत्पन्न करना माना गया है क्योंकि ये गुण स्थायी हैं और सदा के लिए मनुष्य का जीवन दृष्टिकोण निश्चित कर देते हैं । इन गुणों का विकास शिक्षा काल में स्वयं नहीं हो जाता वरन् शिक्षक को ध्यान पूर्वक इसके लिए चेष्टा करनी पड़ती है । यदि विद्यार्थी नियंत्रित प्रयोग अपने शिक्षक के निदेशन में प्रयोगशाला में करे और स्वयं ही प्रयोगों को भिन्न-भिन्न परिस्थितियों में अपने ही हाथों से पूरा करे तो इसके द्वारा स्वावलंबन की भावना जागृत होती है और वैज्ञानिक रीति से कार्य करने की आदत हो जाती है ।

❑❑❑

पोप जॉन पॉल द्वितीय : कुछ रोचक जानकारियां...

(पृष्ठ 24 का शेष भाग....)

ने डारविन का अपमान किया और उन्हें अदालतों में घसीटा । 1882 में मर कर भी डारविन मुक्त नहीं हुए और उन पर लांछन और मुकदमे चलते रहे ।

1992 की प्रायश्चित-रस्मों के समय पोप जॉन पॉल द्वितीय ने गैलीलियो को एक दूरदर्शी आविष्कर्ता घोषित किया । इस घोषणा से उन्होंने इटली और रोम को एक अजीब असमंजस से उबार लिया ताकि 2000 में जब तीसरी सहस्राब्दी का उदय हो तो उस समय इटली और रोम अपने महानायक गैलीलियो को दूसरी सहस्राब्दी का युगपुरुष घोषित कर सकें । इसी तरह 1996 में डारविन संबंधी प्रायश्चित-रस्मों द्वारा पोप ने आदम और हव्वा की मनगढ़ंत कहानियों से हम मनुष्यों को भरपूर राहत दी । उन्होंने माना कि डारविन ने अपने सिद्धांतों से मनुष्यों में भाई-चारे की नयी नींव डालने की कोशिश की । सभी मनुष्यों का उद्गम-स्रोत जब एक ही है तो ज़ाहिर है कि मनुष्यों के बीच रूप-रंग, ऊंच-नीच और जाति-पाति के भेद बनावटी हैं । यह कहने की ज़रूरत नहीं कि प्रायश्चित की ये रस्में संपूर्ण विज्ञानी-संप्रदाय से क्षमायाचना के तौर पर पूरी की गयीं । निश्चय ही इनमें ज्यादातर ब्रूनो जैसे विज्ञानी भी थे जिन्हें चर्च के आदेश पर जिंदा जला दिया गया था । अतः यह रस्म अदायगी व्यष्टि के नाम में समष्टि के लिए थी ।

पोप जॉन पॉल द्वितीय के समूचे जीवन पर नज़र डालिए तो पायेंगे कि वे अपने पूर्ववर्ती पोपों से बिल्कुल अलग, बिल्कुल निराले पोप थे । उन्होंने इस सच्चाई को तीव्रता से महसूस किया था कि विज्ञान इस विश्व की नयी संस्कृति ही नहीं, धर्म के प्रचार और प्रसार का असरदार वाहक भी है । फलस्वरूप उन्होंने धर्म और विज्ञान के बीच सदियों से मौजूद यूरोपियन खाई को पाटने के लिए एक मज़बूत सेतु बनना सहर्ष स्वीकार कर लिया । वे मन से भी सच्चे विज्ञानी और सच्चे धर्मगुरु थे, तभी कहते थे कि "हॉरोस्कोप से कोई नतीजा नहीं निकलता, नतीजा निकलता है स्वयं की मेहनत व ईश्वरीय आस्था से ।" और हां, वे अन्य पोपों से कहीं अधिक धार्मिक व ईश्वरवादी भी सिद्ध हुए । उनके कार्यकाल में दुनियाभर में फैले अनीश्वरवादियों का जो बुरा हाल हुआ है, वह आज जगविख्यात है !

पोप जॉन पॉल द्वितीय को वैज्ञानिक जगत की श्रद्धांजली

विज्ञान संचार

डॉ. मनोज पटैरिया,
23/4761, अंसारी रोड, दरियागंज, नयी दिल्ली - 110 002.

"विज्ञान संचार वह कुंजी है, जो जनोपयोगी ज्ञान विज्ञान के दरवाजे का ताला खोलकर विज्ञान की जानकारी और वैज्ञानिक दृष्टिकोण को जनता तक पहुंचा सकती है और विज्ञान और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में हो रहे नये विकासों के प्रति जागरूक बना सकती है, ताकि वे भूख, अकाल, अंधविश्वास और अज्ञान के संत्रास का सामना साहस और आत्मविश्वास के साथ करने में सक्षम हो सकें।"- ***पुस्तक की जिल्द से उद्धृत***

पुस्तक के पहले कदाचित् विज्ञान संचार के बारे में बात करना आवश्यक है। विज्ञान संचार अर्थात विज्ञान का संचार। विज्ञान संचार अपने में विज्ञान पत्रकारिता, विज्ञान लेखन, विज्ञान लोकप्रियकरण, विज्ञान शिक्षण की कुछ अवधारणाएं, न्यूनतम विज्ञान, वैज्ञानिक सोच, इत्यादि अनेक विषयों को अपने में समाये हुए है। यह ऐसा क्षेत्र है जिसका उद्देश्य समाज की वैज्ञानिक सोच की प्रवृत्ति को प्रखरित करना है। 'विज्ञान संचार' विषय को लेकर अस्पष्टता की स्थिति अब समाप्त हो जानी चाहिए।

'विज्ञान संचार' पुस्तक को देखकर स्वत: यह आभास हो जाता है कि लेखक विज्ञान संचार की बारीकियों की अच्छी समझ रखता है। पुस्तक में लेखक ने विज्ञान व प्रौद्योगिकी संचार को यूं स्पष्ट किया है - "विज्ञान और प्रौद्योगिकी संचार, विज्ञान और प्रौद्योगिकी की अपेक्षाकृत एक नयी शाखा है जिसके अंतर्गत आम तौर पर वैज्ञानिक और प्रौद्योगिकी अनुसंधान की जानकारी को लोगों तक पहुंचाने और उनमें वैज्ञानिक दृष्टिकोण विकसित करने की विभिन्न तकनीकों तथा इनके प्रभाव और इनसे जुड़े अन्य पहलुओं का अध्ययन किया जाता है।" विज्ञान लेखन किस तरह अन्य लेखन से हटकर है, इसको स्पष्ट जान लेना विज्ञान लेखक के लिए अत्यंत आवश्यक है। अन्यथा विज्ञान लेखन में अपने उद्देश्य - समाज में वैज्ञानिक दृष्टिकोण फैलाना व विज्ञान के प्रति उत्सुकता को प्रोत्साहित करना, से कुछ भटक सकने की गुंजाइश बढ़ सकती है। विज्ञान लेखन के तत्त्वों बल्कि पंच तत्त्वों - वैज्ञानिक विषय वस्तु, भाषा शैली/प्रस्तुतीकरण, क्यों और कैसे, वैज्ञानिक विश्लेषण व रोचकता-को लेखक ने यथोचित महत्व दिया है और साथ ही विज्ञान लेखन के पंचसूत्रों यथा - भाषा, वैज्ञानिक विषय, संचार माध्यम, लक्ष्य वर्ग व विधाएं भी सुरुचिपूर्ण और विद्वतापूर्ण विज्ञान लेखन के लिए आवश्यक जान उचित स्थान पर स्पष्ट कर दिया है। विज्ञान-विधि को भी पाठकों के लिए पुनरुद्धित करने के पीछे शायद किसी भी लेखक को विज्ञान लेखन से जोड़ने की भावना ही प्रतीत होती है। ठीक भी है, विज्ञान लेखकों की तो हमारे जैसे देश व समाज में एक नहीं, दस नहीं, पूरी फौज खड़ी करने की आवश्यकता है। हमारे जैसे क्यों, विकसित देशों का समाज भी शायद वैज्ञानिक दृष्टिकोण की कसौटी पर न जाने कितना खरा उतरता हो !

विज्ञान संचार पुस्तक को पांच भागों में बांटा गया है। हालांकि क्रमबद्ध तरीके से पुस्तक की विषय-वस्तु विज्ञान संचार के सभी आयामों को वर्णित नहीं करती है, इस पर भी विज्ञान-संचार विषय की व्यापकता व महत्व को सामने अवश्य रख देती है और साथ ही विज्ञान संचार के तमाम क्षेत्रों के कई बारीक सूत्रों व विधाओं को भी स्पष्ट कर देती है। नियम बाधक नहीं, लेख हर ऐसे लेखक के लिए है, जो सरकारी सेवा से जुड़ा है। वरिष्ठ विज्ञान संचारकों से हुई बातचीत पठनीय विषयवस्तु है। इसको पुस्तक में शामिल करना अभिनव प्रयोग हो सकता है।

पुस्तक का प्रोडक्शन न्यूनतम त्रुटि वाला है। हां, प्रस्तुतिकरण के और बेहतर हो सकने की गुंजाइश अवश्य थी। ऐसे उपयोगी प्रकाशनों का मूल्य कम रखे जाने की व्यापक कोशिशें होनी चाहिए।

प्रकाशक : तक्षशिला प्रकाशन
23/4761, अंसारी रोड, दरियागंज,
नयी दिल्ली - 110 002.
मूल्य : **350 रु (सजिल्द)**
पृष्ठ : **225**
भाषा : **हिंदी**

❑❑❑

इस पुस्तक पर उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान लखनऊ के सौजन्य से डॉ. पटैरिया को उनके उत्कृष्ट लेखन के लिए बाबू विष्णुराव पराडकर पुरस्कार (2005) से 14 सितंबर 2005 को सम्मानित किया गया। पुरस्कार में एक प्रशस्ति पत्र एवं 20,000 रुपए की राशि शामिल है। डॉ. पटैरिया राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार परिषद, विज्ञान और प्रौद्योगिकी विभाग, नयी दिल्ली में निदेशक के रूप में सेवारत हैं। विज्ञान संचार एवं विज्ञान पत्रकारिता में आपका उल्लेखनीय योगदान है।

सूर्य किरणों की प्यास

बन के गोला घना तेज़ अंगार का, मैं तो जलता रहा तुम सभी के लिए ।
देख करके भी अनदेख चाहे करो, मैं न गाफिल हुआ एक पल के लिए ।

याद मुझको वो दिन जब दिन भी न था, वो विरल धूलि कण जब सिमटते रहे ।
कितने छोटे-बड़े पिंड बनने लगे, पा गुरुत्वा घनीभूत होते रहे ।
तब बना सौर्य मंडल विधाओं में सब, उसमें थी सर ज़मीं जीवनी के लिए ।
देख करके भी अनदेख चाहे करो, मैं न गाफिल हुआ एक पल के लिए ।।1।।

जीवनी शक्ति से सब्ज धरती हुई, पेड़-पालव बने, पशु-पंछी बने ।
ज्ञान-विज्ञान से युक्त मानव बना, सभ्यता उठ चली, व स्मारक बने ।
कितने आदर्श वादी घिसे हैं यहां, किया कुर्बान सब कुछ मिशन के लिए ।
देख करके भी अनदेख चाहे करो, मैं न गाफिल हुआ एक पल के लिए ।।2।।

हैं मेरी रोशनी से ही रौशन सभी, दिन का उजियाला या रात की चांदनी ।
वाष्प उठ करके सागर से बादल बने, मेघ बरसे कहीं दे चमक दामिनी ।।
जीवन शक्ति की शक्ति किरणों से है, इनका बदलाव है मौसमों के लिए ।
देख करके भी अनदेख चाहे करो, मैं न गाफिल हुआ एक पल के लिए ।।3।।

सम हैं प्राणी सभी मेरी ज्योति में, किसको छोटा-बड़ा चाहे दुनियां कहे ।
ले के समता का लाभ छल से यहां, कितने कपटी फरेबी पनपते रहे ।।
है रही ये कसक मेरे दिल में सदा, क्या मेरी ये तपन इस हनन के लिए ।
देख करके भी अनदेख चाहे करो, मैं न गाफिल हुआ एक पल के लिए ।।4।।

है यही आस दिल को ढाढ़स दिये, कोई होगा दीवाना इस भीड़ में ।
जन की सेवा में जिसने मिटायी खुदी, जिसकी आंखों में आंसू पर पीड़ में ।।
उसके दर्शन को प्यासी हैं किरणें मेरी, ये जलन है गँवारा उसी के लिए ।
देख करके भी अनदेख चाहे करो, मैं न गाफिल हुआ एक पल के लिए ।।5।।

डॉ. देवेंद्र नाथ श्रीवास्तव
203, स्पेस एज एपार्टमेंट, दिन क्वारी रोड,
देवनार, मुंबई 400 088.

कुछ फूल : कुछ कांटे

'वैज्ञानिक' का अप्रैल-सितंबर 2005 प्रतियोगिता विशेषांक आज मिला है। हार्दिक धन्यवाद।

परमाणु ऊर्जा विभाग का राजभाषा भूषण पुरस्कार प्राप्त करने के लिए 'वैज्ञानिक' के प्रमुख संपादक डॉ. कोठियाल को हार्दिक बधाई। निर्विवाद रूप से आप इसके लिए सर्वोत्तम पात्र हैं। आप को यह पुरस्कार पहले मिला होता, तो मुझे ज्यादा प्रसन्नता हुई होती। इस सबके बावजूद मुझे लगता है कि आपकी सुदीर्घ सेवाओं का पत्रकारिता जगत में या राष्ट्रीय स्तर पर समुचित मूल्यांकन नहीं किया गया है।

पत्रिका के अंक को पढ़कर सभी आशाएं पूरी हुईं। प्रत्येक अंक पिछले अंकों से बढ़कर होता है। आईंस्टीन पर सामग्री विशेष पसंद आयी। आईंस्टीन की कुछ उक्तियां तो जैसे उनके जीवन दर्शन का सार हैं। इसमें विज्ञान और आध्यात्म की सभी मूल बातें रोचक प्रभावी ढंग से मिली हैं। अन्य सभी रचनाएं भी एक से बढ़कर एक हैं। पत्रिका की मुख्य रचनाएं ज्यादातर विशेषज्ञों की रुचि की होती हैं, लेकिन विज्ञान समाचार और टिप्पणियां तो प्रत्येक जागरूक पाठक को बांधे रहते हैं। कोई भी पाठक विज्ञान के सभी क्षेत्रों का विशेषज्ञ नहीं हो सकता, लेकिन विज्ञान के संबंधित समाचार और टिप्पणियों के प्रति रुचि का निरंतर विस्तार होता रहता है। ऐसे विज्ञान लेखकों और सामान्य लेखकों की ज़रूरत है जो रोचक-तार्किक-व्यावहारिक-मनोवैज्ञानिक ढंग से नयी-नयी वैज्ञानिक जानकारी प्रस्तुत करें। पत्रिका सभी स्तर और रुचि के पाठकों की जरूरत को पूरा करती हैं। पत्रिका निरंतर उन्नति कर रही है। हार्दिक शुभकामनाएं।

ओमप्रकाश वर्मा
ई-4, एन. एम. एल., जमशेदपुर - 831 007.

अप्रैल-सितंबर 2005, वर्ष 37 अंक 2/3 प्राप्त कर प्रसन्नता हुई, विशेषकर पत्रिका के बढ़े हुए स्तर को देखकर। तदर्थ बधाई। प्रतियोगिता में पुरस्कृत लेख, कविताएं तो सभी पसंद आये, परंतु पृष्ठ 55-66 में आईंस्टीन पर लिखे लेख काफी अच्छे लगे। आइन्स्टीन की जीवनी से कुछ बातें सामने आती हैं -

अ) कोई व्यक्ति भविष्य में कितना बड़ा और महान बनने वाला है, यह जरूरी नहीं कि बाकी लोग उसकी विशेषता को शुरू में पहचान सकें। डॉ. सत्येन्द्रनाथ बोस का उदाहरण भी ऐसा ही है। ऐसे और भी होंगे।

ब) शुरुआती जीवन अच्छा न हो तो भी आप काम करके, भविष्य में बड़े और महान बन सकते हैं।

स) कहते हैं कि प्रत्येक सफल व्यक्ति के पीछे एक महिला का योगदान होता है। परंतु आइन्स्टीन के लिए, यह उचित नहीं बैठता। दो विवाह हुए परंतु सहयोग नहीं मिला लगता है।

लेख में पृष्ठ 58 के अनुसार, 1955 में मृत्यु के बाद आइन्स्टीन का दिमाग और आंखें अनुसंधान के लिए सुरक्षित रखे गये। इन 51 वर्षों में अब तक अनुसंधान का काम पूरा हो गया होगा तो रुचिकर बात यह होगी कि इस रिपोर्ट का खुलासा किया जाये जिससे यह मालूम हो सके कि आइन्स्टीन की सफलता का रहस्य क्या था ? पारिवारिक परेशानियों के बावजूद उन्होंने बड़े-बड़े काम किये तो उसका आधार क्या था ?

इस पत्रिका की प्रगति की शुभकामनाओं के साथ।

विजय कुमार शर्मा
2/4, मालवीय नगर, जयपुर - 302 017 (राज.)

'वैज्ञानिक' का अप्रैल-सितंबर 2005 अंक प्राप्त हुआ। प्रतिष्ठित 'राजभाषा भूषण पुरस्कार' प्राप्त करने के उपलक्ष्य में डॉ. कोठियाल को बधाई। यह समाचार पढ़कर मुझे अत्यधिक प्रसन्नता हुई है और कामना है कि आप इसी प्रकार निरंतर पुरस्कृत होते रहें।

'वैज्ञानिक' नये कलेवर में प्राप्त हो रहा है बढ़िया काग़ज़, सुंदर छपाई तथा अच्छे लेख। बधाई एवं धन्यवाद स्वीकार करें। साथ में एक कविता भेज रहा हूं।

धन्य, 'हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद'

विज्ञान और विज्ञान-साहित्य
किसी भाषा विशेष का नहीं।
जो मानते हैं -
विज्ञान मात्र अंग्रेजी में संभव
जानें वे, ज्ञान-विज्ञान का उद्भव
भारत में हुआ था।
वेदों ने यही तो कहा था।
'हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद'
स्तुत्य कार्य कर रही सतत
मातृभाषा में विज्ञान
भारत व भारती का सम्मान।
सबका विज्ञान
सबके हित में विज्ञान।
प्रयास यही कि -
ग्राम-ग्राम तक पहुंचे विज्ञान
हर क्षण - हर पद
धन्य, 'हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद'।

मोहनचंद्र कबडवाल,
मुक्तेश्वर-नैनीताल, - 263138 (उत्तरांचल)

वैज्ञानिक का अप्रैल-सितंबर 2005 का प्रतियोगिता विशेषांक अंक काफी रोचक एवं ज्ञानवर्धक था । इसमें श्री कवींद्र पाठक द्वारा 'अन्य विज्ञान समाचार' में फ्रांस में 2004 में फ्यूजन रिएक्टर बनने की खबर पर नजर डालते ही मेरा मन इस संबंध में कुछ कहने को उत्प्रेरित हुआ । फ्यूजन रिएक्टर इतना चुनौतीपूर्ण कार्य है कि जैसे आपने धरती पर सूर्य को ला खड़ा किया हो चांद पर घर बन सकता है लेकिन धरती पर सूर्य लाना बहुत ही कठिन कार्य है । फ्यूजन अभिक्रिया के लिए सूर्य इतना ताप धरती पर पैदा करना कितना चुनौतीपूर्ण है । लेकिन विज्ञान की दूनिया में असंभव को संभव बनाना ही सही मायने में उसकी कलाकारी एवं कौशल है । फ्यूजन अभिक्रिया के लिए ताप (10^8 ^{0}C) के अलावा कुछ और महत्वपूर्ण घटक जैसे उच्च ताप सहनेवाले यंत्र, नियंत्रित करना, ईंधन की संरचना एवं रखरखाव बहुत ही चुनौतीपूर्ण है । उच्च ताप प्राप्ति के लिए टोकामेक यंत्र सबसे सफल हुआ और इस दिशा में भारत में प्लाज्मा भौतिकी संस्था, एक तथा टोकामेक SST-1 का निर्माण भी हुआ जिसका तापक्रम 10^7 ^{0}C प्राप्त करने का लक्ष्य है और Nb, Ti के मिश्रधातु के अतिचालक पदार्थ की कुंडली पात्र के चारों ओर टोराइडल क्षेत्र में लगायी गयी ताकि 1 मीटर तक ताप 1000 ^{0}C रह सके जिसे अतिचालक पदार्थ अपनी स्थिति को बनाये रखे और अभिक्रिया नियंत्रित रख सके, परीक्षण के बाद ही मालूम होगा कि यंत्र कितना दक्ष एवं सुग्राही है । हालांकि 11 मई 1998 को पोखरण परमाणु परीक्षण से टोकामेक से संबंधित कुछ आंकड़े इकट्ठे किये गये थे जिससे भारत भी चाहे तो इस चुनौती को पूर्ण करने में सक्षम है । टोकामेक जो चुंबकीय परिसीमन पर आधारित है में समस्या यह है कि उच्च ताप सह धातु Nb और Ti के मिश्रधातु न्यूट्रॉन अवशोषित कर रेडियोसक्रिय तत्त्व Nb^{95m} बना देते हैं और अभिक्रिया को शिथिल कर देते हैं। कुछ प्रयोगों में लेसर से ड्यूटेरियम-ट्रिशियम का गोलाकार ईंधन बनाकर उस पर फोकसन किया गया लेकिन यहां लेसर की पल्स चौड़ाई अधिक से अधिक हो और पल्स अंतराल कम से कम (1 ns) से कम न हो । इसके लिए Nd ग्लास एवं जीनॉन लेसर की आवश्यकता होती है जिसकी श्रृंखला का विकास पूर्ण रूप से नहीं हो पाया है ।

पर आशा करते हैं कि वैज्ञानिक इस चुनौती पर अवश्य ध्यान देंगे ।

संजय गोस्वामी

एन. आर. जी. पी, बी.ए.आर.सी., मुंबई - 400 085.

आपके द्वारा प्रेषित वैज्ञानिक वर्ष 37, अंक 2/3 तथा की एक प्रति प्राप्त हुई । वैज्ञानिक के नवीन कलेवर तथा अंतर्राष्ट्रीय स्तर वाले लेखों के संकलन हेतु हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद के सभी सदस्यों को साधुवाद । पत्रिका के स्तरीय लेखों के चयन हेतु संपादक मंडल को विशेष धन्यवाद ।

विजया तिवारी

द्वारा राम प्रताप तिवारी, ग्राम, पोस्ट-पलिया,
हरदोई - 241 402. (उ.प्र.)

विज्ञान कविता

अपना-अपना बोझ

हे ! परमात्मा
तूने बनायी / ढेर सारी
ऑक्सीजन, हाइड्रोजन, नाइट्रोजन,
और / जरा सी
कार्बन डाइऑक्साइड, कार्बन मोनो ऑक्साइड ।
उनको भी शोषित करने हेतु
उगा दिये वृक्षों-लताओं से भरे / हरे-हरे जंगल
गीत गाते झरने, नदियों की कल-कल-कल
परंतु; हमने !
उस अमृत को पीकर भी ज़हर ही उगला,
तेरी हर अच्छाई को
मसला और कुचला ।
काट-काट कर नष्ट करते रहे तेरे जंगल,
बदले में उगाते रहे सीमेंट-कांक्रिट के दलदल ।
छूटी अमराई, रूठा गाँव,
स्वप्न बनी पीपल की छाँव ।
बस धुंआ-धुंआ-धुंआ ही उगलते शहर,
विषाक्त हुई शामे अवध, कश्मीर की सुहानी सहर ।
पापों के बोझ से धरती भी लगी है हिलने,
दुष्कर्मों की सजा शायद अब लगी है मिलने ।
अब वह दिन दूर नहीं,
जब अवनि से अंबर तक
केवल ज़हरीला धुंआ ही भर जायेगा,
हर आदमी अपनी पीठ पर,
ऑक्सीजन सिलिंडर ढोता नज़र आयेगा ।

डॉ. रोहितश्याम चतुर्वेदी 'शलभ'

216, उमेदनगर कॉलोनी, भुज-कच्छ, गुजरात-370001.

आपके कार्यालय द्वारा प्रकाशित "वैज्ञानिक" हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद की पत्रिका की एक प्रति सादर प्राप्त हुई । तदहेतु धन्यवाद ।

पत्रिका में समाहित सभी रचनाएं एवं लेख पठनीय हैं । विशेषकर "जल प्रदूषण : एक वैश्विक संकट" - लेख और "विज्ञान समाचार" ज्ञानवर्धक एवं संग्रहणीय हैं ।

पत्रिका की दिनोंदिन प्रगति हेतु साधुवाद ।

पी. आर. वासुदेवन

कार्यालय महालेखाकार, चैन्नै - 600 018.

"वैज्ञानिक" का अप्रैल-सितंबर 2005 अंक मिला । एक बहुत ही उत्कृष्ट पत्रिका है और मैं कोई बहुत बड़ा लेखक नहीं हूं । मगर इतना कहता हूं कि "वो कहते कागद की लेखी, में कहता आंखन देखी !"

दिलीप कुमार

फ्रेंडस ऑफ लाइफ, निकट-महिन्द्रा वर्कशाप,
आनंदबाग, बलरामपुर (उ.प्र.) - 271201.

रचनाकारों से विशेष निवेदन

कृपया प्रकाशनार्थ पांडुलिपि तैयार करते समय संपादन की सुविधा के लिए निम्नलिखित निर्देशों का पालन करें :

1] (क) विभक्तियों को शब्दों से अलग लिखा जाये -
उदाहरण - 'राम ने', 'मेज पर', 'लड़कों को'
(ख) सर्वनामों की सभी विभक्तियों को मिला कर लिखा जाये-
उदाहरण - 'उसने', 'मैंने', 'उनका', 'हमसे'
(ग) जिन सर्वनामों के अंत में 'ही' अथवा 'ई' लगा हो, उनकी विभक्तियों को अलग लिखा जाये -
उदाहरण - 'इसी से', 'तुम्हीं को', 'सभी को'

2] पूर्वकालिक क्रियाओं के 'कर' को अलग लिखा जाये -
उदाहरण - 'जा कर', 'आ कर', अन्यथा 'कर' मिलाकर लिखें ।

3] संयुक्त क्रियाओं में दोनों अंशों को अलग-अलग लिखा जाये -
उदाहरण - 'आ गया', 'चल पड़ा', 'हो सका'

4] जिन भूतकालिक कृदंत क्रियाओं अथवा विशेषणों का अंत 'या' से होता है, उनके स्त्रीलिंग और बहुवचन रूपों में 'य' का ही प्रयोग किया जाये -
उदाहरण - 'गया, गयी, गये', 'नया, नयी, नये', 'आया, आयी, आये', 'लाया, लायी, लाये', 'पाया, पायी, पाये', 'खाया, खायी, खाये', 'किया, किये' आदि ।
दृष्टव्य है कि 'भाई', 'लाई', 'पाई' आदि संज्ञाएं हैं । भविष्यकाल में ये रूप निम्न प्रकार होंगे - आयेगा, पायेगा, लायेगा, जायेगा आदि । आवेगा, जावेगा आदि प्रयोग ठीक नहीं हैं ।

5] 'हुआ' जैसी जिन क्रियाओं के अंत में 'आ' है उनके स्त्रीलिंग 'हुई' व बहुवचन 'हुए' के अनुसार होना चाहिए ।

6] 'लिये/लिए' : 'लिये' को 'लिया' का बहुवचन रूप मानें और 'लिए' को विभक्ति चिन्ह ।
'चाहिये/चाहिए' : 'चाहिए' ही लिखा जाये ।

7] 'एसा/ऐसा' : 'ऐसा' लिखा जाये ।
'दिखाई/दिखायी' : 'दिखाई' संज्ञा रूप मानें और 'दिखायी' भूतकालिक क्रिया (स्त्रीलिंग) । *उदाहरण* - 'सांप दिखाई पड़ा', 'मैंने उसे पुस्तक दिखायी' इसी प्रकार 'पढ़ाई' और 'पढ़ायी' में भी अंतर करें ।

8] आदरार्थ आज्ञा रूपों में संभावनार्थक क्रियाओं में 'ए' ही लिखा जाये -
उदाहरण - 'आइए', 'खाइए', 'जाइए', 'समझिए', 'कीजिए', 'रखिए' आदि ।

9] अनुस्वार और अनुनासिक ध्वनियां : 'संयुक्त व्यंजन' की अनुनासिक ध्वनि को 'अनुस्वार' के द्वारा दर्शाया जाना चाहिए - वर्ग का प्रत्येक पंचम वर्ण यथा, ङ ('क' वर्ग), ञ ('च' वर्ग), ण ('ट' वर्ग), म ('प' वर्ग), व न ('त' वर्ग) अनुनासिक ध्वनियां हैं ।
अनुस्वार स्थापन का नियम इस प्रकार है : जिस किसी अक्षर के आगे यदि उसी वर्ग की अनुनासिक ध्वनि है तो उसे अनुस्वार (बिंदी) से बदला जा सकता है;
उदाहरण - कंगन, अंक, व्यंजन, रंजन, ठंडा, डंडा, पंडित, कंपन, पंप, बंद, परंतु, किंतु, मृगांक, दंडित, संबंध, अंत आदि ।
इस नियम का प्रयोग ध्यानपूर्वक करना चाहिए, अन्यथा अर्थ का अनर्थ भी हो सकता है । जन्म, मान्य, समन्वय, सम्मति आदि शब्द वैसे ही रहेंगे ।

10] एकवचन से बहुवचन - 'या' से 'ये', 'ए' नहीं । जैसे, रुपया - रुपये, हंसिया - हंसिये ('हंसिए' आदरार्थ आज्ञा रूप होगा)

11] संस्कृत के जो शब्द हिंदी में तत्सम रूप में प्रचलित हैं, उनमें 'य' का व्यवहार उचित है । जैसे, अस्थायी, बाजपेयी, उत्तरदायी आदि । इन्हें अस्थाई, बाजपेई, उत्तरदाई लिखना न तो व्याकरण सम्मत है और न व्यावहारिक ।

12] चंद्र-बिंदु का प्रयोग - छपाई की सुविधा के लिए चंद्र-बिंदु की ज़गह अनुस्वार का प्रयोग किया जाये । जैसे, अंधा, आंख, अंगना, चांद, मां, पहुंचना, हां आदि ।

13] संख्याओं को अरैबिक (अंग्रेजी) में लिया जाये - 1, 2, 3, 4, 5, 6, 7, 8, 9, 0

हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद, ट्रॉम्बे, मुंबई-85 के लिए डॉ. गोविंद प्रसाद कोठियाल द्वारा संपादित एवं श्री कुलवंत सिंह द्वारा ***वन अप प्रिंटर्स,*** चेंबूर, मुंबई-71 (फोन : **25216284**) में मुद्रित व प्रकाशित ।

वैज्ञानिक (त्रैमासिक) R. No. : 18862/70
दिल्ली, नयी दिल्ली, महाराष्ट्र, हिमाचल प्रदेश, राजस्थान व उ. प्र. के शिक्षा विभागों द्वारा स्कूलों व कॉलेजों के लिए स्वीकृत ।

'हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद'
की
वैज्ञानिक मोनोग्राफ प्रकाशन योजना

परिषद ने विज्ञान के विभिन्न विषयों पर मोनोग्राफ (पृष्ठ संख्या लगभग 64, 96, 128, 192, 256) प्रकाशित करने की एक योजना बनायी है । इस कार्य के लिए उचित मानदेय, (120 रु प्रतिपृष्ठ लेखन एवं टंकण, चित्रों इत्यादि के लिए अलग) देने का प्रावधान है । परंतु प्रकाशित सभी पुस्तकों पर परिषद के सर्वाधिकार सुरक्षित रहेंगे । विषय-विशेषज्ञों से लगभग 5-6 पृष्ठों में पुस्तकों की विस्तृत रूपरेखाएं आमंत्रित हैं । जिसमें अध्याय, अनुच्छेद, संदर्भ सूची इत्यादि की जानकारी हो ।

मोनोग्राफ मुख्य वैज्ञानिक विषयों यथा नाभिकीय, ताप, रसायन, जीव विज्ञान आदि पर न होकर उप-विषय, जैसे आइसोटोप, लेसर, रेडियोधर्मिता, अतिचालकता आदि पर हों । उदाहरणार्थ कुछ उप-विषयों के सुझाव इस प्रकार हैं :

- नाभिकीय ऊर्जा के शांतिमय उपयोग
- नाभिकीय रिएक्टर
- नाभिकीय ईंधन - यूरेनियम, प्लूटोनियम
- नाभिकीय पदार्थ - कवच, मंदक, परिरक्षक एवं
- अन्य
- आइसोटोप उत्पादन व उपयोग
- रेडियोसक्रिय विकिरण व उनके उपयोग
- नाभिकीय ऊर्जा एवं सुरक्षा
- एजिंग (काल प्रवाहन) एवं डिकमीशनिंग
- ईंधन पुनर्संसाधन

अन्य संबद्ध कार्य

रूपरेखाओं का मूल्यांकन परिषद द्वारा गठित एक विशेष समिति करेगी । मूल्यांकन रिपोर्ट प्राप्त होने के बाद लेखक को परिषद के साथ लेखन कार्य संबंधी अनुबंध पर हस्ताक्षर करने होंगे । इस संबंध में अधिक जानकारी के लिए परिषद सचिव से इस पते पर संपर्क करें : **श्री जयप्रकाश त्रिपाठी**, प्रभारी अधिकारी, न्यूक्लीयर मैटेरियल मैनेजमेंट अनुभाग, पी. पी., एफ. आर. डी., भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, मुंबई - 400 085

E-mail : jptripathi@rediffmail.com

Tel. : 022-2559 1224